

Vinay Avasthi Sahib Bhuvan Vani Trust Donations

नवधा भक्ति के भक्त

६/१९६०

१७०

५२

२५

४४



५३

५४

सन्त श्री विनीत विहारीदास 'मानसोपदेशक'
"विनीत"

नवधा-भक्ति के भक्त



नवधा भगति कहउँ तोहि पाहीं ।
सावधान सुनु धरु मन माहीं ॥

लेखक

सन्त विनीत विहारीदास "विनीत"

[सर्वाधिकार सुरक्षित]

प्रकाशक

मानस संघ, रामवन
जि० सतना (म० प्र०)

मूल्य ७५ पैसे

नारद पुस्तक भण्डार
कृष्ण बाकीज के सामने, उरद (१०२)

शुभ कामना

दोहा--कर्म बचन मनछाँड़ि छल, जब लग जन न तुम्हार ।
तबलगि सुख सपनेहु नहिं, किये कोटि अपचार ॥

प्रिय भगवत-भागवत-सेवी सज्जनवृन्द ! श्रीरामचरितमानस में परम भक्ता श्री शबरी जी से राघवेन्द्र सरकार ने नवधा भक्ति का वर्णन श्रीमुख से किया ।

प्रथम भगति संतन्ह कर संगी, दूसरि रति मम कथा प्रसंगा ।

गुरु पद पंकज सेवा, तीसरि भगति अमान ।

चौथि भगति मम गुनगन, करइ कपट तजिगान ॥

मंत्रजाप मम हृद् बिस्वासा, पंचम भजन सो वेद प्रकासा ।

छठ दम सील बिरति बहु करमा, निरत निरंतर सज्जन धरमा ॥

सातवँ सम मोहिमय जगदेखा, मोतेसन्त अधिक करि लेखा ।

आठवँ जथा लाभ सन्तोषा, सपनेहुँ नहि देखइ पर दोषा ॥

नवम सरल सब सन छलहीना, मम भरोस हियँ हरष न दीना ॥

इन्हीं नव भक्तियों पर पृथक्-पृथक् एक-एक भक्त चरित्र इस छोटी-सी पुस्तिका में लिखा गया है । भक्तों के चरित्र पढ़ने से ही हृदय में भक्ति भावना वृद्धि पाती है और भक्ति भाव से ही परम पिता प्रभु की प्राप्ति होती है । रामवन से प्रकाशित होने वाली "मानस-मणि" पत्रिका में नवधा "भक्ति के नवभक्त" निकल चुके हैं परन्तु "मणि" के ग्राहक भी इस पुस्तक में कुछ नवीन भाव चरित्रों, सहित प्राप्त करेंगे । कथावाचक भक्त व्यासों के लिए और प्रभु प्रेमी सज्जनों के लिए यह पुस्तक प्रिय हो, यही इस लेखक की शुभ कामना है ।

अक्षय तृतीया,

हरिदासानुदास "विनीत"

शान्ति आश्रम, चिरगाँव

नवधा भक्ति के भक्त

प्रथम भगति संत कर संगी

भक्त ब्रजदास की जाति का ठीक निर्णय नहीं हो सका। कोई इन्हें जाति का कुन्हवो बताते हैं, कोई रविदास (रैदास) वंशीय कहते हैं। एक महात्मा ने इन्हें बरसाने के स्वपच जो नन्द गाँव के पंडित के हाथ से पानी नहीं पिये कहा था। कल्याण पत्र के प्रसिद्ध लेखक श्री चक्र जी ने एक अंग्रेज के साथ इनका साक्षात्कार हुआ सुनाया था। अस्तु

हमें भक्तों की वंश-विवेचना नहीं करना है। परन्तु इतना अवश्य कहना है कि निम्न जाति के भक्तों पर जितनी शीघ्र प्रभु की कृपा होती है, उतनी उच्च वर्णों पर नहीं होती। इसका कारण उच्च वर्ण के भक्तों को जातीयता का अभिमान रहता है और “जाति विद्या महत्वं च रूप यौवन मेव च” यह पाँच भक्ति में कंटक बताये गये हैं। इसलिये हम ब्रजदास को रैदास वंशीय ही लिखेंगे। यह श्रीराधिकाजी की जन्मभूमि बरसाने में रहते थे। साठ वर्ष की आयु हो चुकी थी। घर में एक अविवाहिता पुत्री थी जिसका नाम रती बाई था परन्तु प्रेमवस बृद्ध पिता इसे रतिया कह कर पुकारते थे। ब्रजदास सत्संगी और संत सेवी थे तथा नित्य करताल बजाते हुये प्रातः-काल कीर्तन करते थे। बरसाने में बस्ती के बाहर एक बृद्ध सन्त बहुत दिन से पड़े थे और नन्दगाँव जाने का विचार कर रहे थे। वैशाख पूर्णिमा की रात्रि में ब्रजदास सन्त के पास दर्शनार्थ पहुँच गया। सन्त ने कहा—ब्रजदास !

मुझे नन्दगाँव जाना है, कोई दूसरा मजदूर खोज लेता इसके लिये पैसा नहीं है। सामान कुछ अधिक है तुम भेज आओ भैया ! भगवान तुम पर कृपा करेंगे। ब्रजदास ने कहा—महाराज भेज आऊँगा परन्तु प्रातःकाल ही चलना जिससे लौटने में मेरे लिये धूप न होने पावे। संत ने स्वीकार कर लिया। ब्रजदास घर आये और पुत्री से बोले रतिया सबेरे मैं एक साधु को भेजने नन्दगाँव जाऊँगा तू रसोई तैयार रखना उधर से आकर भोजन करूँगा।

चार बजे प्रातः ब्रजदास संत के पास पहुँचे और कहा चलिये महाराज ! संत पहले से ही तैयार थे। छाता कम्बल इत्यादि बाँध कर इसे दे दिया और ठाकुर जी तथा पूजा के पात्र कमण्डल इत्यादि संत लेकर चल दिये, बरसाने से नन्दगाँव पाँच मील है। संत को स्वाँस का रोग था। वृद्धावस्था और स्वाँस के कारण एक-एक फलङ्ग पर दस, बीस गज चलकर बैठ जाते थे। नन्दगाँव पहुँचने में मध्याह्न काल हो गया, तप्त धूप के भोकों से शरीर झुलस रहा था, पृथ्वी जल रही थी। नन्दबाबा के प्रसिद्ध मन्दिर के द्वार पर सिर से बोझा उतारा, दो-चार साधु मन्दिर से बाहर निकल आये और ब्रजदास से कहा—बुड्ढा कुछ पानी बानी पियेगा ? ब्रजदास बोला नहीं महाराज ! जो संत साथ लाये थे उन्होंने कहा एक-दो रोटी माँगे देता हूँ कुछ जलपान करके जाना ब्रजदास ने उत्तर दिया।

गीत—अब न कहना देवता मुझसे यहाँ जलपान की।

कृपा ही केवल रहे दासों पै दयानिधान की॥

जिन्दगी में आज बरसाने से आया मैं यहाँ।

है उमर दो चार दिन की और इस अज्ञान की॥

महाराज साठ बरस का हो गया कभी नन्द गाँव नहीं आया ! संत ने कुछ डाँटते हुए कहा, अरे तुम्हें यहाँ प्रसाद पाने में क्या हानि है ? पानी क्यों नहीं पीता ? ब्रजदास ने कहा—आप साधु होकर कैसी बातें कहते हो ?

जानते हो आप बाबा याँ पै बाबा नन्द के ।
लाल को ब्याही गई प्यारी सुता बृषभान की ॥

(हमारे यहाँ बृषभान राय की बेटी यहाँ नन्द बाबा के कन्हैया को ब्याही है ।) इतना सुना तो कुछ साधु हास्य करने लगे अरे यह तो नन्द बाबा का समधी निकल आया ? अरे कुछ बेटी को भेंट दिये जा । ब्रजदास आँखों के अश्रु पोंछते हुये बोले—

हम गरीबों पै भला क्या भेंट बेटी के लिए ।
है बहुत जो कर सके रक्षा धरम ईमान की ॥

महाराज हमारे पास क्या रक्खा है ? इतना ही बहुत है कि अपना घमँ रख सकें, ऐसा कहते हुये बरसाने को लौटे । मन्दिर के पट खुले थे और भगवान श्यामसुन्दर सब की बात सुन चुके थे । विचार करने लगे कि इसके पास लौटा-रस्सी कुछ भी नहीं है कहीं प्यास से विकल न हो जाये ? अन्त-र्यामी अदृश्य भक्त के पीछे चले । जब यह नन्दगाँव और बरसाने के बीच में आये तो प्यास के मारे एक वृक्ष के नीचे गिर गये । भगवान कृष्ण दौड़े इनके समीप आये, शरीर को हिलाया-डुलाया, परन्तु कण्ठ सूख गया था कुछ बोल न सके ।

दोहा—बुला बुला कर थक गये बोलत नहीं कुछ वैन ।

भक्त बछला नन्दलाल के भर आये दोउ नैन ॥

भगवान ने पिछले भक्तों के उद्धार, दुष्टों के संहार पर सिंहावलोकन किया और कहने लगे—

उद्धार अनेक जनों के लिए खल मारे हैं एक से एक बली ।
 प्रह्लाद गजेन्द्र सती द्रौपदी लख दीन सभी की विपत्ति दली ॥
 अबके यही भक्त से पालौ परौ जेहि पै चतुराई न एक बली ।
 यहिकौ दुखदूर विनीत करै यदि आवै यहाँ बृषभान लली ॥

मेरे बुलाने से नहीं बोलता है इसका विशेष प्रेम राधिकाजी पर है । यदि वह यहाँ पधारें तो अवश्य इसकी रक्षा हो सकती है । नन्दगाँव न आकर श्रीनन्दकुमार दुपहरी में बरसाने पहुँचे । पर्वत पर बने हुए श्री जी के महल में खसकी टट्टियों पर गुलाब जल का छिड़काव हो रहा था । नृत्य के साथ गायकों द्वारा मधुर संगीत गान हो रहा था । अचानक भगवान कृष्ण ने मन्दिर में प्रवेश किया । श्री राधिका जी खड़ी होकर प्रभु के सन्मुख विनम्र भाव से कहने लगीं—

दोहा—खरी दुपहरी जेठ की ऐसे में ब्रजराज ।
 दासी पर करके कृपा आये हौं केहि काज ॥

ऐसे अवसर पर भी श्यामसुन्दर का विनोदी भाव न गया था । प्रिया जी से कहने लगे—

दोहा—मन्दिर में संगीत सुनि मगन हो रहीं आप ।
 नन्दगाँव की डगर में डरो तुम्हारो बाप ॥

श्री राधिका जी मुस्कान के साथ बोलीं—महाराज ! मेरा बाप कैसा यह तो सुनाइये ? भगवान ने सशंकित भाव से कहा । यह पीछे पूछना पहले पानी ले आइये ! इस समय थोड़ा ही बिलम्ब हो गया तो वहाँ कुछ ठ

पाओगी ? और ऐसे प्रेमी भक्त के लिए सर्वदा पछताओगी । श्री प्रिया जी तैयारी करने लगीं तब तक भगवान कृष्ण सब गाथा सुना गये । राधिका ! तुम्हारे बरसाने का चमार आज इस घोर कलिकाल में नन्दगाँव में पानी नहीं पीता ? और हमारे तुम्हारे सम्बन्ध के कारण तुममें उसका अति प्रेम है । तुम्हें इस भेष में जलती पृथ्वी पर आते देखेगा तो उसे महान दुःख होगा, आश्चर्य नहीं कि शरीर ही छोड़ दे । इसलिए तुम उसकी बेटी रतिया के भेष में जाओ एक पीतल की थाली में साधारण भोजन और मिट्टी के पात्र में जल ले जाओ । जीवित होगा तो वह सन्तोष से भोजन कर लेगा और जल पी लेगा । क्या हुआ ?

कवित्त—पीतल की थाली पर भोजन लगाये भट ।

शीतल सुनीर घट बीच भर लाई है ॥

धोपरी में धाई तापै भानु ने तपाई देह ।

गोरे मुख माँहि कालिमा सी आन छाई है ॥

झलका झलक आये अनेक मुरझाये से ।

पाँव पियराये से प्रत्येक पीर पाई है ॥

भक्त ब्रजदास 'विनीत' भव बाधा हरन ।

रतिया की रूप आज राधा धर आई है ॥

दो०—पिता ! पिता ! बोलन लगीं प्रिय पुत्री की भाँति ।

चातक के मुख में परी मनहु आन के स्वाँति ॥

“भूतक जियावन गिरा सुहाई” सुनकर वृद्ध भक्त उठ कर बैठ गये । पुत्री ने भोजन का थाल और जल आगे रख दिया । प्रथम जल पिया पुनः भोजन करते हुये बोले । बेटी तुम्हें मेरी अस्वस्था का पता कैसे लगा, किसने सुनाया ? रतिया ने कहा मैं जानती थी कि आप नन्दगाँव में पानी नहीं पियेंगे ? जब आने में विशेष विलम्ब हो गया तो समझ गई कि कहीं भूखे

प्यासे बैठ गये अतः भोजन लेकर चली आई। फिर मुँह फेर कहने लगी घर पर पाहुने आ गये आज्ञा हो तो मैं जाऊँ। ब्रजदास बोले पाहुने बिना सूचना दिये आ गये ? अच्छा बेटी तू जा मुझे भोजनों में आनन्द आ रहा है। सन्ध्या तक आ जाऊँगा।

शाम को ब्रजदास थाली और जल का घड़ा लिए घर आये और प्रसन्न मुद्रा से बोले—रतिया तू न जाती तो मर जाता ? आज का भोजन तो तूने बड़ा ही स्वादिष्ट बनाया था ला तेरे हाथ चूम लूँ, और पानी तो अमृत था। उसके पीने से मेरी जन्म-जन्म की पिपासा शान्त हो गई। शरीर की जलन, मार्ग का परिश्रम उसके पीते ही जाने कहाँ चला गया। रतिया आश्चर्य से बोली पिता जी मैं कहाँ गई ? फिर तो पिता पुत्री में प्रश्नोत्तर होने लगे।

ब्रजदास—रतिया तू कहीं नहीं गई क्या कह रही है ?

रतिया—हाँ हाँ कह तो रही हूँ मैं घर छोड़ कर कहीं नहीं गई ?

ब्रजदास—और पाहुने कहाँ ठहरे हैं ? उनको मुझे प्रणाम करना है ?

रतिया—कोन पाहुने ? यहाँ तो कोई पाहुना नहीं आया ? इतना सुनते ही ब्रजदास के आँसू बहने लगे। पुत्री के पैरों पर पड़ते हुये बोले—रतिया तू घन्य है आज तेरे भेष में मुझे जगत जननी ने दर्शन दिया है ? रतिया पाँव छुड़ाती हुई बोली पिता जी क्या पागल हो गये ? बोले हाँ पागल हूँ। करताले उठाई और माते हुये श्री जी के मन्दिर की ओर चल दिये।

संकीर्तन (गीत)

मनुआ राघे राघे बोल ।

कहूँ तू पतितन में पतित कह जग जननी बोल ॥

तेरे कारण कष्ट सह अमृत पिबा गई बोल ॥ म० रा०

इनके मुख से आज विचित्र आकर्षक ध्वनि निकल रही थी । जिस मार्ग से निकले दुकानदारों ने दुकानें छोड़ दीं । नौकरों ने दफ्तर छोड़ दिये । कीर्तन करते हुये सभी पीछे लग गये । श्रीराधिका जी के मन्दिर के सामने कमी ब्रजदास रोते थे कमी साष्टांग पड़ जाते थे और व्याकुल होकर कहते थे ।

जन्म जन्म नहिं दे सके इस ममता को मोल ।

मिट जा उनके नाम पर मनकी घुन्डी खोल ॥ म० रा०

सभी स्त्री-पुरुष आज इनके प्रेम संकीर्तन में तन्मय हो रहे थे । एक घण्टा के पश्चात् सबको होश आया तो देखा ब्रजदास का प्राण पखेरू श्री प्रिया जी के चरणों में लीन हो चुका था । शास्त्रों में लिखा है कि मृत्यु समय पर एक वैष्णव आ जावे तो मृत प्राणी की सद्गति होती है । उसी समय न जाने किसने सूचना कर दी नन्दगाँव बरसाने के सभी सन्त महात्मा आ पहुँचे । भक्त ब्रजदास के शव का विमान बनाया और यही ध्वनि “मनुवां राधे बोल” कहते हुये अन्तिम संस्कार किया । यही मानव शरीर की सद्गति का प्रमाण है ।

प्रथम भगति सन्तन्ह कर संग ।

बोलिये भक्त वत्सल भगवान की जय ।

दूसरि रति मम कथा प्रसंगा ॥

जब यह सेवक प्रथम बार वृन्दावन गया तब देखा कि सभी मन्दिरों की आरती प्रातःकाल सूर्योदय के समय होती है परन्तु बाँके बिहारी जी की

मंगला आरती एक प्रहर दिन चढ़े होती है। इसका कारण चित्रकूट में एक सन्त ने उत्तम श्रोता बताया। गाथा इस प्रकार सुनाई थी कि वह श्रोता कथा में एक क्षण मात्र पहुँच गया था।

किसी ग्राम में एक ग्वाल गोवें चराया करता था, श्रावण मास था। मध्याह्न काल में जल की घोर वृष्टि हुई। गोवें, बछड़े वन से ग्राम की ओर भाग दिये और अपने घरों में प्रवेश कर चुके। ग्वाला ने सोचा अभी आधा दिन शेष है ? ग्राम में भ्रमण करूँगा और देखूँगा कि कहाँ ब्या हो रहा है ? एक मन्दिर में श्रीमद्भागवत की कथा हो रही थी, ग्वाला वहीं बैठ गया। कथा में व्यास जी ब्रज का वर्षा वर्णन कर रहे थे। हरी हरी भावना पर आपने एक छन्द कहा—

कवित्त

हरे हरे मुकुट की हरी छवि छाजत है।
हरी हरी यमुना की हरी लहर आई है ॥
हरी हरी डूम डार भूलै श्री बन मुरारी।
हरे हरे पवन की दुनिया बनाई है ॥
हरी हरी भूमि पर धावत हैं हरे हरे।
हरे हरे भांगा मध्य सोहत तरुणई है ॥
बच्छन के पाछे मुकुट बांधे मोर पक्षन को।
यमुना के कक्षन में नृत्यत कन्हाई है ॥

पंडित जी गद्गद कंठ से कहने लगे—धन्य है ब्रजभूमि जहाँ भगवान् कृष्ण गोवें चराते हैं। ग्वाले ने इतनी ही कथा सुनी; और विचार करने

लगा भगवान ब्रज में गौयें चराते हैं ? तो मैं वही गौयें क्यों न चराऊँ ? प्रभु को विश्राम मिलेगा और मुझे वहाँ भी भोजन प्राप्त होता रहेगा । उसी दिन गाँव की गौयें चराना छोड़कर ब्रज को चल दिया । कई महीनों में मथुरा वृन्दावन पहुँचा और पूछने लगा, क्यों भाई यहाँ भगवान कृष्ण गौयें चराते हैं ? सुनते ही कितने लोग हँसते थे, कोई इसे पागल समझता था । एक विशाल मन्दिर में प्रवेश कर देखा दस बीस गौयें हैं चार छः शिष्य हैं प्रश्न किया क्या इसी मन्दिर की गायें श्रीकृष्ण चराते हैं ? महन्त ने देखा बड़ा मोला मनुष्य है । मधुर वाणी से कहा हाँ, इसी मन्दिर की चराते हैं । ग्वाला हाथ जोड़कर बोला महाराज अब यह गौयें मैं चराऊँगा । उन्हें विश्राम करने दो । ग्वाला मन्दिर की गायें चराने लगा । स्थानीय साधु उसे बासी दाल रोटी बाँध देते थे वही भोजन यह पाता रहे और प्रेम से यमुना किनारे गौयें चराया करे । सन्ध्या की आरती होने पर मन्दिर के द्वार पर खड़ा-खड़ा मन में कहा करे, ऐसे बैठ गये । अब इतना ही नहीं बनता कि कभी छोटे-छोटे बछड़ों को ही बाँध छोड़ दिया करो । एकादशी व्रत आया । व्रत के कारण आज मण्डार नहीं चेता था । द्वादशी को प्रातःकाल किसी ने इसके लिये बासी दाल रोटी नहीं बाँधी । ग्वाला गौयें लेकर यमुना किनारे पहुँच गया, सोचता था कि कोई भोजन लेकर समय पर आवेगा ? आठ वजे से प्रतीक्षा करने लगा दस बज गये, बारह बज गये ? ग्वाला भूख से व्याकुल होने लगा उसी समय देखता है, यमुना के उस पार जैसी मूर्ति मन्दिर में थी वैसे ही शृंगार किये एक सुन्दर बालक कदम्ब की डाल से पीली पोटरी लटकाता हुआ कह रहा है । ग्वाले भक्त तुम्हारा भोजन यह बघा है । ग्वाला प्रसन्नता से देखता है वही मुकुट है, वही बन माल है, श्यामली सुन्दर मूर्ति है । दोड़ा ही कि पास जाके दर्शन करूँगा ? चरणीं में पड़ूँगा ? परन्तु यमुना के नीचे ऊँचे कगार में गिरता पड़ता जब उस पार पहुँचा तो देखा वहाँ कोई भी नहीं है । कदम्ब की झुकी हुई डाल में छोटी सी पोटरी अवश्य बँधी थी । पोटली खोलते ही देखा उसमें अनेक प्रकार के पकवान

मिठाइयाँ मरी पड़ी हैं । ग्वाला वहीं बैठ कर प्रेम से पाने लगा और कहने लगा ।

गीत--आज भोजन तुम्हें नाथ लाने पड़े ।

कैसे कैसे पदारथ बनाने पड़े ॥

न हुई उन महन्तों को मेरी खबर ।

मन्दिर में पुजापा कराने पड़े ॥ आज भो० ॥

महन्त तो केवल पुजाने के लिए मन्दिर में पड़े हैं उन्हें मेरी चिन्ता क्यों होगी ? प्रभु आप भोजन क्यों लाये हो वह भी मैं समझ गया ।

जानते हो कभी भाग देगा जो ये ।

फिर से गौयें न मुझको चराने पड़े ॥ आज भो० ॥

सोचता है ऐसा भोजन मुझे नित्य मिले तो शरीर हृष्ट-पुष्ट हो जावेगा दुर्बलता दूर भाग जावेगी ? फिर देखता है धूल में चरणों के चिन्ह बने हैं । कितना प्रेम था ग्वाले का, उन चरणों की रज अपने माथे से लगाई और गद्गद कंठ से कहने लगा ।

मुझे रुखी ही रोटी "बिनीत" मिले ।

इन चरणों को आने न जाने पड़े ॥ आज भो० ॥

नित्य का यह नियम था भोजन से शेष जो रोटी रहती थी वह गाय बछड़ों को देता था । आज इतना प्यारा प्रसाद था कि कुछ भी न छोड़ा गया अवृत्त सा रहा । पीला वस्त्र भाड़ कर बगल में दाब लिया । गाय को नाना

लोटा गीये यथा स्थान बाँध दीं। आज उसे महन्त पर क्रोध आ रहा था अपनी ग्रामीण भाषा में गरजता हुआ बोला।

दोहा—क्या महन्त जी चल बसे सगरे चेला आज ?

जो भोजन लेकर गये बन में श्री ब्रजराज ?

महन्त ने हँसते हुये कहा, हम यह कैसे मान लें कि तुम्हें प्रसाद वह दे आये ? बोला देखिये न ? यह उन्हीं का पीतांबर है जो छोड़कर चले आये। महन्त जी काँप गये ? पीताम्बर तो सरकार का ही है। सोचने लगे यह तो पहुँचा हुआ प्रभु का भक्त है इससे गायें चरवाना अपराध है ? पुनः धैर्य धर के बोले। ग्वाले भक्त ! अब तुम्हारे लिए ऐसी आज्ञा है गाय चराना छोड़कर मन्दिर के प्रहरी बनो। जब भगवान का शयन हो जावे तब तुम प्रमुख द्वार बन्द कर दो फिर किसी को न आने दो, न जाने दो। ग्वाल पहरेदार बन गया। एक पहर रात बीतने पर फाटक बन्द कर लेना कार्य था। कितने ही दिन बीतने पर एक रात्रि बारह बजे भगवान श्रीकृष्ण शृंगार किये बाहर जाने को मन्दिर से निकले। ग्वाला जाग रहा था, घबरा कर खड़ा हो गया। काँपता हुआ बोला महाराज कहाँ जा रहे हो ? भगवान ने कहा आज एक मन्दिर में रास है वहाँ जाऊँगा। प्रहरी ने प्रश्न किया रास क्या होता है महाराज ! श्रीकृष्ण ने कहा एक उत्सव है। फिर प्रश्न हुआ वहाँ आप क्या करेंगे ? मुरली मनोहर ने मुरली दिखाते हुये कहा नाचेंगे, गायेंगे, बंशी बजायेंगे। और क्या करेंगे ? ग्वाला बोला नहीं जाने दूँगा। भगवान ने कहा क्यों नहीं जाने देते ? तब प्रहरी बोला।

कवित्त—रात आँधियारी खोर न निहारी तुम।

बालक बिहारी कहुँ बाट भूल जाओगे ॥

ब्रज के चवाईं जुरैं लोग लुगाईं तहाँ।

काहू से कन्हाई कछु झगारि करि आवोगे ॥

Vinay Avasthi Sahib Bhuvan Vani Trust Donations

लौटे नहि लाल तो प्रातः काल ही कुमार ।
 पहरदार ही को कारागार में पठावोगे ॥
 नीति यह 'विनीत' या तो साथ में ले लीजे मोहि ।
 अथवा अकेले नहि नाथ जान पावोगे ॥

श्याम सुन्दर ने मुस्कराते मचलते हुये कहा भैया तुम किसी प्रकार मुझे जाने दोगे ? ग्वाले ने कहा, हाँ यदि आप मुझे साथ में लोगे । ग्वाले को साथ लिए चले थोड़ी ही दूर चलकर मोहन मचलने लगे, कहने लगे हम तो थक गये तुम्हारे कंधा पर चढ़के चलेंगे ? ग्वाला कुछ नीरस भाव से बोला जब आप नाचेंगे ! कूदेंगे तब न थकेंगे ? बाइये कंधा पर चढ़ आइये । ग्वाला प्रभु को कंधा पर लिए जा रहा था उसके माग्य पर भगवान की कृपा पर देवता आकाश से कह रहे थे ।

सुने भगवान उयों भक्तों के दुख नसाने को ।
 भक्त ही होते हैं भगवत का मन रिझाने को ॥ सु० भग ॥
 लोक ही तीनों को नचाथा है जिसकी माया ने ।
 लिए जाता है उसे भक्त यह नचाने को ॥
 नाम जिसका कि मिटा देता है झगड़े जग के ।
 उसे झगड़ों से चला-ग्वाला यह बचाने को ॥

रास-मन्दिर आ गया भगवान ने कहा उतार दो भैया, यही स्थान है । जब श्री श्याम सुन्दर अन्दर जाने लगे तो ग्वाला से कहा तुम द्वार पर ही रहो कोई भीतर प्रवेश न करने पावे । मैं रास मण्डल में जा रहा हूँ । ग्वाला बोला महाराज मुझे यहाँ भी पहरा देना पड़ेगा । समझ गया आज रात में सोना असंभव है । रात्रि के तृतीय पहर में भगवान शंकर दर्शनों के लिए जाये । नन्दी (बैल) पर सवारी, मुंडों की माला सहित गले में विषधर सर्प

लपेटे देख ग्वाला कांप गया ? देखकर सोचा यह कहीं की आपत्ति आ रही है ? दर्शनामिलायी श्रीशंकर जी प्रथम बोले---भैया जय गोपाल ! उत्तर मिला तुम कौन हो ? प्रार्थी की माँति भोले बाबा ने कहा मैं कैलाशपति महादेव हूँ दर्शन करने आया हूँ । क्या गोपाल कृष्ण मन्दिर में हैं । ग्वाल रोकते हुये, खड़े होकर डाँटते हुये बोला ।

सवेया

मग में मिलिहैं मनमोहन लै, वृषवाहन बाहर ही बिचरौ ।

छबि देखन को ब्रजभूषण की तन के सब दूषण दूर धरौ ॥

(अगर उन्हें देखना चाहते हो तो यह साँप इत्यादि निकाल कर फेंक दो)

बिकराल बिलोकत भेष तेरो हमरो कहूँ बाल गोपाल डरौ ।

परतीति 'विनीत' धरो हिय में फल पावहुगे जो प्रवेश करौ ॥

शंकर जी बोले उनसे । ज्ञा ले आओ ? भैया नित्य का आने वाला हूँ और इसी भेष में आता हूँ । ग्वाला मन्दिर में स्वीकृति लेने गया वहाँ देखता है भगवान कृष्ण गोपिकाओं के बीच में अकेले नाच रहे हैं । उठते हैं, बैठते हैं, कभी सीधे कभी तिरछे होते हैं ग्वाला चिन्ता करने लगा । हरे राम ! राम ! आज तो यह हार जायेंगे बड़ा परिश्रम कर रहे हैं ? पुनः चारो ओर देखा, अरे ! यहाँ तो पुरुष कोई भी नहीं है ? स्त्रियाँ ही स्त्रियाँ हैं ? अब तो इस रास से ग्वाले को ग्लानि हो गई, झेंपकर वही एक कोने में बैठ गया । नाचने में एक मोतियों की माला भगवान के गले से टूट कर नीचे गिर पड़ी ग्वाला ने मन में बिगड़ते हुए, सरोष नेत्रों से देखते हुये, माला उठाकर जेब में रख ली । रास चौथे पहर में समाप्त हुआ । ज्योंही ग्वाले को साथ लिये सरकार बाहर निकले श्री शंकर जी खड़े दिखाई दिये ।

मधुवाणी से श्याम सुन्दर बोले—आज आपने रास में दर्शन नहीं दिये ? भोले बाबा ने कहा आपके इस पहरेदार ने नहीं आने दिया । श्रीकृष्ण कहा क्षमा करो—भगवन् यह तो हमें खरी खोटी सुनाता है । ग्वाला अपने स्वामी को कंधे पर लेकर चला । दस बीस गज चलने के पश्चात् कहने लगे, यदि आप अप्रसन्न न हों तो आज मुझे कुछ कहना है ? भगवान ने प्रसन्नता से कहा कहो क्या कहते हो ? नीचे उतार दिया और शिक्षक बन कर कहने लगा—

कवित्त—घाम तजि आये हो ब्रज की विलोकन वाम ।
 ऐसो कर काम नीको नाम नहि पावोगे ॥
 सबल क्या करेगो ? दधि माखन को भोज तुम्हैं ।
 रोज रोज ऐसो जो रहस रचावोगे ॥
 लागे पहर से 'बिनीत' बीति जागत रात ।
 भागत प्रभात घनश्याम घर आवोगे ॥
 चिंता न अपनी मोहि लाड़िले तिहारी सोंह ।
 काहू दिन बिहारी बीमार पड़ जावोगे ?

दो०—हँसि के मायायति कछो, होनी होय सो होय ।
 साथी तुम सम पाइके, नित्य खेलने मोय ॥

अब तो ग्वाला को विशेष क्रोध आ गया । रोज का नियम इसी तरह का रहा तब तो मैं मर जाऊँगा । आज ही रात मैं तो मैं अधमरा सा हो गया हूँ । अब इसने कंधे पर नहीं लिया । क्रोध भरा आगे चल दिया, भगवान् श्रीकृष्ण उसी के पीछे चल दिये । वह सोचता कि क्या से क्या हो गया ? अपने ग्राम में गायें चराता हुआ आनन्द करता था । यहाँ आने से मेरी उन्नति अवश्य हो गई, मामूली ग्वाले से सरकार का पहरेदार बन गया हूँ,

परन्तु कितनी जिम्मेदारी बढ़ गई, मन्दिर का प्रवेश द्वार खुला छोड़ आया, अगर किसी दिन रात में मालिक साहब खो गये, तो फाँसी पर लटकाया जाऊँगा। दोनों ओर से यहाँ मेरा मरना हो गया। घबराहट को हृदय में न रोक सका, सहसा खड़ा हो गया। रोते हुये बोला—मैं यह नहीं समझा था कि इस ब्रज में मुझे यहाँ तक फँसना पड़ेगा। भगवान श्री श्यामसुन्दर ने मुस्कराते हुए कहा—भैया ! मैं भी यह न समझा था कि संसार के ऋषि और महात्माओं को छोड़कर मुझे तुम्हारे बन्धन में बँधना पड़ेगा। इस प्रकार सेवक और स्वामी एक दूसरे से लड़ते-झगड़ते उलाहना देते हुये मन्दिर पर पहुँचे। भगवान सीढ़ियों पर चढ़ते हुए कई कोठों को पार करके निज मन्दिर में सो गये : ग्वाला भी द्वार पर लेट गया, परन्तु उसे आज नींद नहीं आ रही थी। बड़ा बुरा फँस गया। यहाँ से किस प्रकार छुटकारा पाऊँ ? सोच ही रहा था कि सवेरे के चार बजे, पुजारी ने जागरण कराने के लिए नगाड़े बजाये। जब भगवान को जगाने के लिए नगाड़े बजाये जाने लगे, तो स्वामी की सुकुमारता पर इसका हृदय द्रवीभूत हो गया। एक दम खड़ा होकर पुजारियों से कहने लगा—

दो०—अरे पुजारी रात से, करो न यों उतपात।

नींद भरे नन्दलाल जू, अबहीं सोवत जात ॥

फिर महन्त की ओर उलाहना देते हुये बोला—

दो०—रात रास देखन गये, फिरे होत भिनुसार।

कहँ लौं घर घर में फिरै, पीछे पहरेदार ॥

फा०—२

महन्त जी ने हँसते हुये ग्वाले से पूछा—क्या तुम भी साथ में गये थे ?

ग्वाले ने जेब से मोतियों की माला निकाली महन्त के सामने फेंक दी ।
और बोला—

दो०—जो नहिं जाती साथ में, तौ होती का हाल ।

मोहन की मिलती कहाँ, यह मोतिन की माल ॥

माला देखकर महन्त जी रोने लगे, अपना माथा पीट कर कहने लगे—

गीत—समझ को सकै श्याम लीला तुम्हारी ।

करो रंक से राव राजा भिखारी ॥

पड़े पीढ़ियों से प्रभो तेरे कारण ।

मन्दिर में सन्त महन्त पुजारी ॥

महन्ती करते-करते कितनी गड़ियाँ नष्ट हो गई ? पूजा करते-करते पुजारी चल बसे ? किसी को भी दर्शन न हुआ, और इस ग्वाले पर इतनी कृपा ? घन्य हो भगवान आपकी लीला नहीं जानी जाती । ऐ भोले भक्त ! आज से इस मन्दिर में हमारा पुराना नियम न चलेगा और न भगवान का ही नियम चले । तुम्हारी आज्ञा के अनुसार ही सब कार्य होगा । क्योंकि भक्तों के द्वारा ही भगवान की लीला का परिचय होता है ।

भक्तवर ! तुम्हारे द्वारा मालूम हुआ है कि सरकार रात्रि में रास करने पधारें थे, और इसी तरह नित्य रास क्रीड़ा करने जाते हैं । बस आज से इस मन्दिर की मंगलारती एक प्रहर सूर्योदय पर नित्य हुआ करेगी चाहे कोई भी श्रुतु हो ।

बन्धुओं ! वही श्री बाँकेबिहारी जी का मन्दिर है, वही श्याम सुन्दर भगवान हैं, और वही सेवा कुञ्ज हैं, जहाँ पर रास हुआ था। उस स्थान पर रात्रि में आज भी पुष्पों से सेज सजाई जाती है। लीलाविहारी अपनी अलौकिक लीला दिखाते हैं। परन्तु रात्रि के समय वहाँ कोई आज भी जा नहीं सकता, न मालूम कौन-सी दैवी शक्ति की प्रेरणा है। इस ग्वाला भक्त की भक्ति से परिवर्तित नियम आज भी वृन्दावनधाम में सुचारु रूप से यथावत चल रहा है।

सज्जनो ! सोचियेगा, ग्वाला श्रोता भक्त था। वही भक्ति श्री राघवेन्द्र सरकार ने परम भक्ता शबरी जी से दूसरी भक्ति के नाम से कही है।

“दूसरि रति मम कथा प्रसंगा”

बोलिये भक्त और उनके भगवान की जय ।

“गुरु पद पंकज सेवा, तीसरि भगति अमान”

सभी मनुष्य कहा करते हैं “पानी पीजें छान, गुरु कीजें जान” परन्तु मैं आज यह सिद्ध करने के प्रयास में हूँ कि यदि गुरु में श्रद्धा है, शिष्य में सच्ची गुरु भक्ति है, तो उसे भगवत् प्राप्ति हो सकती है। शिष्य की गुरु भक्ति साधारण गुरु को गुरुत्व शक्ति प्राप्त करा सकती है। इसीलिए श्री रामचरित मानस में श्रीराघवेन्द्र सरकार ने परम भक्ता शबरी जी से कहा है—

‘गुरु पद पंकज सेवा, तीसरि भगति अमान’

एक उत्तम भागवती व्यास ने उस राजकुमारी का नाम वैराग्यवती इसलिये कहा था कि उसे पाँच वर्ष की आयु में ही विलासिता से वैराग्य हो गया था। माता उसे विशेष पदार्थ भोजन के निमित्त देती, तो उन्हें फेंक देती सूखी रोटी और भुने हुए चने बड़े प्रेम से पा लेती थी। बहुमूल्य रेशमी वस्त्रों से सदा घृणा करती थी। मोटे-फटे पुराने कपड़े ही अपने शरीर से लपेटे रहती थी। फिर भी माता उसके आकर्षण के लिये उसके कमरे को सुन्दर वस्त्राभूषणों से सजाये रहती थी। किन्तु इसकी रुचि संसारी चमक-दमक की ओर न हुई।

वैराग्यवती बारह वर्ष की हो गयी, एक दिन वह अपनी माता के साथ पुष्पवाटिका में चली गई। वहाँ उसने देखा कि एक पुष्प पेड़ के नीचे पड़ा है, दूसरा डाली में लगा हुआ मुरझा गया है, और तीसरा फूल खिल रहा है। फूल की तीनों दशा देखकर उसने माता से प्रश्न किया—

दो०—आज खिले फूल झुक चले, परसों मिलिगे धूल।
देख दशा यों फूल की, फिर क्यों फूलत फूल॥

माता ने कहा, बेटी ! 'इसी का नाम परिवर्तन है, संसार के सभी प्राणी और सभी पदार्थ इस प्रकार बनते, बिगड़ते रहते हैं। तेरे पिता के देखते दादा मिट्टी में मिल गये, तेरे देखते हुए मैं भी एक दिन इसी मिट्टी में मिल जाऊँगी और तू भी किसी दिन न रहेगी। अपने कर्मों के अनुसार हम तुम फिर कहीं जन्म लेंगे। जन्म मरण के चक्कर में पड़े हुये प्राणियों की दशा पर पश्चात्ताप करती हुई वैराग्यवती अपनी माता के साथ रामभवन में आई। एक दिन सन्ध्या समय एकांत में बैठी हुई इस प्रकार कह रही थी।

दो०—हम देखत सब जग गयौ, जग देखत हम जाहिं।

ऐसा सुत गुरु ना मिलो, प्रकृ कलक है जगहिं॥

महल के पीछे एक चोर राजकुमारी के शब्दों को सुन रहा था । समझ गया इसे किसी गुरु की आवश्यकता है । दूसरे दिन सन्ध्या समय लुकता, छिपता चोर साधु भेष में राज पुत्री के द्वार पर पहुँचा और पीने को पानी माँगने लगा । उस समय राजकुमारी अकेली ही थी, तुरन्त जल लेकर बाहर आई । साधु ने उससे प्रश्न किया कि—क्या तुम दीक्षित हो ? तुमने किसी गुरु से मन्त्र लिया है । राजकुमारी ने कहा अभी नहीं लिया । छद्मवेधी साधु ने कहा अदीक्षित के हाथ से हम जल न पिवेंगे ।

राज पुत्री ने बड़ी दीनता से हाथ जोड़कर प्रार्थना की । महाराज ! आप ही मुझे गुरु मन्त्र देकर कृतार्थ करियेगा । वह कपटी साधु बोला—हम त्यागियों का मन्त्र राज सभनों में नहीं दिया जाता । वर्षों जंगलों में सेवा करने पर ही गुरु मन्त्र प्राप्त होता है । अगर तेरी इच्छा है, तो त्याग दे इन उच्च अट्टालिकाओं को, तभी तुझे सच्चा सुख, शान्ति और मोक्ष पद प्राप्त होगा । चल सघन वन में । राजकुमारी बड़ी प्रसन्न हुई, कहने लगी—गुरु-देव ! साथ में क्या-क्या ले चलूँ ।

मायावी साधु ने कहा—अपने आभूषणों की पिटारी । वैराग्यवती संसार के आवागमन से मुक्ति पाने के लिये पहिले से उतावली थी । तुरन्त ही एक पिटारी में बहुत से बहुमूल्य आभूषण लेकर उसी क्षण उसके पीछे चल दी ।

बहुत दूर चलने पर जब सघन वन आ गया, तब वह प्रपञ्ची साधु एक बट वृक्ष के नीचे ठहर गया । कमर से एक रस्सी निकाल कर राजकुमारी के दोनों हाथ मन्त्र पढ़ते हुए बाँध कर कहने लगा—बेटी ! धबड़ाना मत यह दीक्षा संस्कार ऐसा ही होता है । अभी हम तुझे मन्त्रों से बाँधते हैं और फिर मन्त्रों से ही खोलेंगे । गुरु भक्ता वह राज कन्या कुछ न बोली चुपचाप

बैठती रही, यहाँ तक कि उस दुष्ट ने उसे बट वृक्ष से भी जकड़ दिया । गहनों की पिटारी उठाई और चलने लगा ।

वैराग्यवती ने विनम्र भाव से कहा—गुरुदेव ! आप कहाँ जा रहे हैं ? उसने कहा—तेरी आयु का एक प्रहर बीत गया है । दूसरे प्रहर बीतने पर आऊँगा तब इस बन्धन से मुक्त करूँगा ।

रात बीत गई, परन्तु वह न आया । इधर प्रातःकाल होने पर राजकुमारी की दासियाँ सेवा के लिये आईं, बहुत ढूँढ़ने पर भी न मिली तो महारानी से कहा—राजकुमारी जी अपने महल में नहीं हैं एकदम कोहराम मच गया । राजा के पास समाचार भेजा गया उन्होंने चारों ओर घुड़सवार दौड़ाये । कुछ सेवकों को साथ लिये राजा ढूँढ़ता हुआ स्वयं उस बट वृक्ष के नीचे आया । अपनी प्यारी पुत्री का यह दशा देखकर बड़ा दुखी हुआ । पूछने लगा—बेटी ! यहाँ किस तरह आईं तुम्हें कौन बाँध गया है ? पुत्री ने कहा मुझे गुरुदेव बाँध गये हैं । वही छोड़ने के लिये आवेंगे । आप मेरे बन्धन खोलने की चेष्टा न करें । क्योंकि—

गुरु के वचन प्रतीति न जेही ।

सपनेहु सुगम न सुख सिधि तेही ॥

आप मेरी चिन्ता न करें, मुझे गुरु आज्ञा पालन करने दीजिये । पुत्री की बात सुनकर राजा निराश होकर चला गया ।

जब इस प्रकार बन्धन में पड़े तीसरा दिन हो गया तब तो भगवान का आसन डोल उठा । उन्होंने नारद जी से कहा कि—मेरा आसन बार-बार डोल रहा है । आप जाकर देखिये कौन तपस्या कर रहा है ।

नारद बाबा मृत्युलोक आये और देखा एक कृपकाय बालिका बट वृक्ष से बैठी खड़ी है । समझ गये भगवान को सशङ्क करने वाली यही समस्या है । इसे तो मैं अभी ठीक किये देता हूँ ।

बड़े प्रेम से बोले बेटी ! तुझे कौन बांध गया है ? क्या मैं तेरे बन्धन खोल सकता हूँ ? राजकुमारी ने कहा—गुरुदेव बांध गये हैं । वही आकर मुक्त करेंगे, आप क्यों कष्ट करते हैं ?

नारद ने कहा—पगली कहीं गुरु भी कष्ट देते हैं ?

बेटी ने कहा—बाबा तुम नहीं जानते, उनके कष्ट देने में ही मेरा कल्याण छिपा होगा ।

नारद ने उत्तर में कहा—यह तूने कैसे जाना ?

बेटी ने उत्तर दिया

दो०—गुरु कुमार घट शिष्य है, गढ़-गढ़ काढ़त खोट ।
भीतर कर अवलम्ब दें, बाहर भारत चोट ॥

कुम्हार घड़े को जब सुन्दर बनाता है, तब उसके ऊपर चोट मारता है, परन्तु भीतर हाथ दिये रहता है ।

नारद जी चुपचाप चले गये । साकेत बिहारी भगवान के समीप आकर बोले—दीन दयाल दीनानाथ ! एक मोली बालिका को कोई दुष्ट गुरु बन कर बांध गया है । कोई और विशेष कारण मुझे नहीं जान पड़ा । भगवान ने कहा—आप उसे छोड़ क्यों नहीं आये ? नारद ने कहा भगवान् ! मैंने उसे छोड़ाने को कहा था । परन्तु वह तो मेरी ही गुरु बन गई । उल्टा कुम्हार के घड़े का उपदेश देने लगी । जिस घूर्त ने उसे बांधा होगा वह अपने आप क्यों आने लगा ? अब तो आप ही उसका उद्धार करियेगा । भगवान श्याम सुन्दर नारद जी के साथ उस राजपुत्री के पास आये । नारद जी ने उससे कहा बेटी ! गुरु लोग शिष्यों को जप, तप, व्रत और दान इत्यादि सीख-
लाते हैं ।

अप तप मख सम दम व्रत दाना ।

बिरति बिबेक जोग विज्ञाना ॥

आदि जितने साधन हैं उनके द्वारा क्या होता है ।

‘रघुपति-पद-प्रेमा’

सो वही नन्द नन्दन सरकार तेरे सामने खड़े हैं । तुझे इस बन्धन से ही नहीं संसार के सभी बन्धनों से मुक्त करने पधारें हैं अपने नेत्र खोल दे । राजकुमारी अपने नेत्र खोलकर भगवान के दर्शन किये, आनन्द मग्न होकर रोने लगी । और कहने लगी—

कवित्त

बाँधत है देव गुरु छोरत प्रतीति यही ।

रीति यही बाद-विवाद नहि बढ़ाऊँगी ॥

आप करें मोक्ष गुरु बाँधे यों विरोधी भाव,

सुन के स्वप्न में सन्तोष नहीं पाऊँगी ॥

नारद ने कहा पगली ! शरीर नष्ट हो जायगा ।

बेटी ने फिर कहा—

दीन हीन नखर शरीर के विषाद साथ,

नाथ नहिं सनातन मर्यादा मिटाऊँगी ।

आप के करन सों कृपालु नन्द नन्दन जू,

बाँधों गुरुदेव को न बन्धन छुड़ाऊँगी ॥

भगवान ने कहा ‘नारद जी अब इसके गुरु को खोज कर ले आओ ।’

नारद ने कहा ‘भगवन ! कहीं चोरों का भी स्थायी ठिकाना होता है

आज यहाँ, कल वहाँ, मैं कहीं मारा-मारा फिरूँगा ?' भगवान ने कहा तुम्हीं तो मेरे सी० आई० डी० हो। विलम्ब न करो, जल्दी ही उसे तलाश करके अपने साथ ही ले आओ। भगवान की ऐसी आज्ञा सुनकर नारद जी उसे ढूँढ़ने चल दिये। एक जगह वही चोर साधु भेष में मिल गया।

नारद ने कहा चलो, तुम्हें भगवान् ने बुलाया है। वह बोल उठा, नहीं नहीं बाबा ! किसी और भक्त को बुलाया होगा। तुम भूल रहे हो। मैं तो चोर हूँ, नारद जी ने जोर देकर कहा मैं नहीं भूल रहा हूँ तुम्हीं को बुलाया है। चोर ने कहा इसका कारण ? नारद जी कहने लगे 'तुम्हारी शिष्या राज पुत्री को दर्शन दे रहे हैं, मुझे दर्शन देते हैं और अब तुम्हें भी दर्शन देना चाहते हैं। परन्तु,

है न सराहन योग्य सुता,

जेहि ने जग के सब भोग तजे हैं।

दर्श दिखावत मोहि रहैं,

गुन गावत धावत अंग थके हैं ॥

औ प्रभु की प्रभुता न विनीत,

सदैव प्रतीत के पंथ पगे हैं।

कारण कौन न मैं समझो,

तुमसे हत भाग के भाग जगे हैं ॥

नकली गुरु नारद के साथ आया। जहाँ इसने भगवान् के दर्शन किये हृदय के सभी पाप नष्ट हो गये ! भगवान् श्याम सुन्दर ने मुस्कराते हुये कहा—अपनी इस शिष्या का बन्धन खोल दो। इसका दीक्षा संस्कार तुम्हारे द्वारा बड़ा ही उत्तम हुआ है। राजकुमारी बन्धन मुक्त होकर देखती है कि एक ओर भगवान् खड़े हैं और दूसरी ओर गुरुदेव ! कहने लगी—

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, का के लागूं पांय ।

बलिहारी गुरुदेव की, गोविन्द दिये मिलाय ॥

गुरु भक्ता बेटी गुरु के चरणों को प्रथम स्पर्श कर रही थी । भगवान् श्यामसुन्दर खड़े-खड़े मुस्करा रहे थे और नारद बाबा वीणा लिये गा रहे थे ।

‘गुरु पद पंकज सेवा, तीसरि भगति अमान’

‘चौथि भगति मम गुन गन, करै कपट तजि गान’

एक बार सदैव हरि गुण गान करने वाले सन्त तुकाराम जी से प्रेम से पटेल ने कहा कि हम तुमको भोजन के निमित्त दो बीघा गेहूँ का बोया हुआ खेत दे रहे हैं । इसे तुम रखाये रहना । इस खेत से दस मन गेहूँ प्राप्त होता है । पाँच मन हम ले लेंगे और पाँच मन तुमको दे देंगे ।

तुकाराम जी अपना सितार और करताल लेकर खेत पर जा बैठे । जब कमी कोई गाय खेत में चरने आ जाती, तो तुकाराम जी उसे न भगाते थे । सोचते कि आज मेरे खेत में गोमाता ने कृपा की है तो कमी गोपाल भी दर्शन देंगे । चिड़ियाँ चुगने आतीं तो बड़े प्रसन्न होते थे । चिड़ियाँ पौधों पर उछलतीं तो यह खेत की मेंड़ पर नाच-नाच कर कीर्तन करने लगते थे ।

जय सीताराम सीताराम सीताराम जय सीताराम ।
 गौर्यें श्री गोपाल की; गायों के गोपाल ॥
 ग्वाल बाल संग में लिए, कब ऐहो नन्दलाल ।
 जय राधेश्याम राधेश्याम राधेश्याम जय राधेश्याम ॥

दोहा—राम नाम को बीज है, राम नाम को खेत ।
 आधो पंछी राम के, चुगो राम के हेत ॥

जय सीताराम सीताराम जय सीताराम

इधर तो तुकाराम जी कीर्तन में मस्त रहते उधर गायों और पक्षियों ने खेत का धन समाप्त-सा कर दिया । जब फसल के कटने का समय आया तब एक दिन पटेल खेत देखने के लिये गया । वहाँ पर मैदान साफ देखकर बड़ा दुखी हुआ । तुकाराम से बोला 'पगले तुम्हें जब खेत के कुछ लाभ-हानि का ध्यान ही नहीं, तो इसे तूने क्यों लिया था ? संत ने भी सीधे स्वभाव से कह दिया आपने मुझे क्यों दिया ?' अब पटेल क्या कहता ? चुप-चाप लौट आया । दूसरे दिन कचहरी में तुकाराम के ऊपर दावा कर दिया, कि इसने मेरे पाँच मन गेहूँ का तुकसान किया है ।

सम्मन के द्वारा निश्चित तारीख पर तुकाराम जी को अदालत में हाजिर होना पड़ा । न्यायाधीश के पूछने पर उन्होंने कहा खेत को कटवा लिया जाय । अगर पाँच मन से अनाज कम होगा तो मैं नीख माँगकर पटेल को दूँगा ।

पटेल को खेत कटवाने का हुक्म मिला । खेत में जहाँ तहाँ कुछ डंठल खड़े थे । खेत की कटाई हो रही थी देखने वाले खिल्लियाँ उड़ा रहे थे और कहते जाते थे कि इसमें वह क्या देगा ।

वृण हू न, या मैं रहो कैसे तुकाराम देव ।

कट कट के खेत खलिहान में आयो है ॥

ऊपर से दाँयँ दर्ई बर्धन कौ बार-बार ।

झार-झार झाडुवन ढेर सो लगायो है ॥

पवन के झकोरन, उड़ायो भुसाकौ भार ।

रास पै बिहारी ने रहस रचायौ है ॥

काटत उड़ावत 'विनीत' जू न जान परौ ।

तौलत धान्य पूरे पचीस मन पायौ है ॥

पटैल ने यह चमत्कार देखा तो दौड़ता हुआ अदालत में आया और सन्त पर दावा रखने वाले एक-एक कागज को फाड़-फाड़ कर फेंकने लगा । कचहरी में जितने मनुष्य थे, सब चकित होकर यह विचित्र कौतुक देख रहे थे ।

सबके देखते-देखते पटैल सन्त तुकाराम जी के चरणों पर गिर पड़ा और रो-रो कर कहने लगा कि 'महाराज' क्षमा करियेगा । मुझे दुष्ट ने आपसे न जाने कितने कटु अपशब्द कहे हैं । व्यर्थ ही अदालत में घसीटता फिरा, मेरे यह पाप किस प्रकार मिटेंगे ।

तुकाराम सन्त प्रसन्न होकर कहने लगे आप चिन्ता न कीजिये, मुझे तो इस बात की बड़ी प्रसन्नता है कि आपका गेहूँ पूरा हो गया । मुझे भीख माँगने से बचा दिया है पटैल ने यह प्रश्न करना चाहा कि उस उजड़े हुए खेत में से इतना धान्य किस प्रकार प्राप्त हुआ ?

किन्तु प्रश्न के साथ ही पटल के हृदय में यह शब्द गूँज उठा :—

“चौ भि भगति मम गुन गन, करै कपट तजि गान”

बोलिये भक्त और भगवान की जय

मन्त्र जाप मम हृद विस्वासा ।

पंचम भजन सो वेद प्रकासा ॥

क्या इस पाँचवीं भक्ति का मन्त्र, विधान सहित गुरु से ही लेना चाहिये ? क्या इस भक्ति का अधिकारी कोई आचार्य विद्वान अथवा उच्च वर्ण का ही हो सकता है ? नहीं श्री राघवेन्द्र सरकार ने स्वयं शबरी जी से स्पष्ट कहा है ।

नव महुँ एकहु जिनके होई ।

नारि पुरुष सचराचर कोई ॥

सोइ अतिसय प्रिय मामिनि मोरे ।

सकल प्रकार भगति हृद तोरे ॥

श्री स्वामी रामकृष्ण जी के एक माषण में पढ़ा या कि—मथुरा के समीप यमुना पार गोपों की एक छोटी सी बस्ती थी । एक प्रौढ़ा शोपिका नित्य मथुरा के बाजार में दूध दही बेचने जाया करती थी । उसे यमुना पार करने के लिये नौका पर जाना पड़ता था । केवट को दो पैसे इषर से और दो पैसे उघर से नौका की उतराई देनी पड़ती थी । रोज दो रुपया का दूध-दही बेच आती थी ।

एक दिन मथुरा से लौट रही थी, विश्राम घाट के पास बाजार में स्थूल शरीर के एक वृद्ध पंडित जी कथा कह रहे थे। सहस्रों स्त्री-पुरुष श्रोता के रूप में कथामृत पान कर रहे थे। खाली मटकी सिर पर रखे हुये यह भी खड़ी हो गई।

पंडित जी शबरी प्रसङ्ग कह रहे थे “मन्त्र जाप मम दृढ़ विस्वासा” यही भवसागर से पार होने की भक्ति है।

दोहा—भटक रह्यौ संसार में, कर-कर भ्रष्टाचार।

भव सागर से जीव, यह कैसे जावे पार ॥

तन बल, धन बल, बुद्धि बल, सरै न कौनहु काम।

एक बार मुख से कहो, जय श्री राघेश्याम ॥

मनुष्य एक बार मुख से राघेश्याम कह लेवे, भवसागर से पार हो जायगा। फिर संसार की छोटी-मोटी नदियों को पार करना क्या बड़ी बात है? दही बेचने वाली ने यह कथा सुनी तो गद्गद् हो गई। मटकी पृथ्वी पर रख दी; जहाँ खड़ी थी वहीं साष्टांग दण्डवत् पड़ गई। धन्य हो महा-राज ! मेरे निमित्त बड़ा ही उपयोगी प्रसङ्ग सुनाया।

आज वह नाव घाट पर न जाकर वन में होती हुई यमुना के किनारे पहुँच गई। उस पार सामने ही उसका ग्राम दिखाई देता था। श्रावण का महीना था, यमुना में अगम जल मरा था। उसकी तेज धारा का वेग देख कर बड़ा मय लगता था। उसने राघेश्याम कह कर जल में पग रखा। पाँव न डूबा; दूसरा पाँव भी राघेश्याम कह कर रखा, वह भी न डूबा इसी प्रकार वह राघेश्याम कहती हुई यमुना के उस पार हो गई। अपने घर आकर ग्वालिन बड़ी प्रसन्न थी।

उसे भगवत नाम के प्रभाव के साथ विशेष प्रसन्नता यह थी कि “मेरे नित्य के चार पैसे बचेंगे। महीने में दो रुपये बचेंगे साल में चौबीस रुपये बचाकर अपनी बहू के गहने गड़वाऊँगी। मथुरा से सुन्दर साड़ी लाऊँगी, अब तो जीवन में सहस्रों रुपये बचा लूँगी।”

उसे राधेश्याम नाम से ऐसा प्रेम हो गया कि जब भी समय मिलता तभी नाम का जाप कर लिया करती, नित्य सबेरे घर से चलती तो राधेश्याम का कीर्तन करती थी। लौटते समय भी वही धुन लगाये अपने घर आती थी।

इस प्रकार कई दिनों के बाद नाम जाप के प्रभाव से उसकी बुद्धि में कुछ परमार्थ करने की बात सूझी। सोचने लगी, जिन गुरुदेव से इतनी सुन्दर युक्ति प्राप्त हुई, उन्हीं का निमन्त्रण करके अपना गृह पवित्र कर लूँ। समझ लूँगी एक महीना और नौका से उतरी थी। एक मिट्टी के पात्र में दो पैसे नित्य के डालने लगी। जब एक महीना समाप्त हो गया, तब उसने पात्र के पैसे सम्हाले। पूरा एक रुपया हो गया था।

वह सोचने लगी—घी, दूध और आटा तो घर का ही है। इस रुपये में बाजार से शक्कर, साग और मेवा आदि सब कुछ आज ही ले जाऊँ, साथ ही कल के लिए पंडित जी का निमन्त्रण भी कर आऊँ। मथुरा की गलियों में खोजती हुई पंडित जी के घर पहुँच गई। हाथ जोड़कर विनम्र शब्दों में बोली—महाराज। कल मेरे यहाँ आपका निमन्त्रण है। पंडित जी ने बड़ी प्रसन्नता से पूछा। बेटी कहाँ रहती है? ग्वालिन ने कहा—यमुना पार मेरा मकान है एक छोटा-सा गाँव है उसी में रहती हूँ, कल मैं स्वयं आपको लेने आऊँगी।

दूसरे दिन वह दूध, दही बेचकर पंडित जी को लिवा कर घर को चली। मादों का महीना था, वह नाव घाट का मार्ग छोड़कर अपने घर की ओर सीधी चल दी।

पंडित जी ने कहा ! नौका के लिए तो यह मार्ग है। तू उधर कहाँ जा रही है ! बोली 'आपको घाट पर क्या कुछ काम है ? इस रास्ते से मेरा घर आधे मील से कम है, और नाव के घाट चार मील पड़ेगा। आइये, सीधे निकल चलें।' पंडित जी ने समझा कि इसने वहाँ पर किसी किशती या डोंगी का प्रबन्ध किया होगा, चल दिये। यमुना के किनारे पहुँच कर पंडित जी इधर-उधर देखने लगे। ग्वालिन ने कहा—'अय राघेश्याम, आइये गुरुदेव !'

पंडित जी घोती सम्हालने लगे, ग्वालिन पानी पर पैर रखे खड़ी हुई उन्हें बुला रही थी।

पंडित जी ने कहा—कि बेटी तू पानी में कैसे चल रही है ?

वह बोली वाह महाराज ! आपकी ही बताई युक्ति से तो मैं पानी पर चल रही हूँ। आप ये क्या कह रहे हैं ?

आइये न ! पंडित जी ने पहला पैर रक्खा तो कमर से जल में चले आये। घबरा कर लोट पड़े उससे कहने लगे बेटी ! जहाँ तू चल रही है वहाँ पर क्या पुल बना है ? या पत्थर है। लोट कर तू मेरा हाथ पकड़ ले, तेरे चरण चिन्हों पर ही पीछे-पीछे मैं चलूंगा।

गोपी ने हाथ पकड़ लिया, आइये, राघेश्याम कह कर चलने लगी। ज्योंही पंडित जी ने पैर रक्खा त्यों ही कमर से पानी में चले गये। हाथ को छुड़ा कर भागते लगे मगर उसने न छोड़ा। राघेश्याम कहती हुई आगे बढ़ने लगी। पंडित जी घबरा कर चिल्लाने लगे।

छोड़ छोकरी मुझे यहीं, दे दे जीवन दान ।

मैं तेरा पण्डित प्रोद्धित नहीं, तू मेरी जजमान ॥

फेर दो मुझको मेरे धाम ।

वह बोली—

गुरु जी बोलो राधेश्याम ।

वह खींचे जा रही थी । गले तक पानी आ गया । पंडित जी पुनः बोले—

अरे भँवर यह प्रसने आई, लहर लपेटे लेत ।

या कोई घड़ियाल घड़ी में, मोकू लीले लेत ॥

पापनी कर न पाप का काम ।

हाथ को कस कर पकड़े हुए बोली—

गुरु जी बोलो राधेश्याम ।

अब तो पंडित जी गिड़गिड़ा कर कहने लगे—मेरे पास दस रुपये हैं, सीने की अँगूठी पहने हूँ । यह सब तुम्हें दे दूँगा मुझे छोड़ दे । अरी दुष्टा । अगर मैं मर गया तो मेरा पुत्र तुम्हें जीवन न छोड़ेगा । तेरे घर में आग लगवा देगा ।

उसने फिर भी न छोड़ा; पंडित जी उल्टे-सीधे होकर गोते खाने लगे । विशेष कष्ट होने पर सन्देह हुआ कि—यह मानवी नहीं है कोई दानवी दुष्टा है । यों कहने लगे—

है चुड़ैल जादूगरनी, अथवा मायावी नार ।

यही सोच कर पंडित जी, मूट करने लगे पुकार ॥

उबारो राधावर धनश्याम ।

(पीछे वह भी बोली ।)

गुरु जी बोलो राधेश्याम ।

पंडित जी के मुख से निकला “उबारो राधावर घनश्याम” पार हो गये । किनारे पर गोपिका का तरुण पुत्र खड़ा हुआ प्रतीक्षा कर रहा था । उसने कांपते हुए पंडित जी को सूखे वस्त्र पहनाये । भोजन को आसन लगाया, थाल सामने आ गया । पंडित जी को भोजन में विशेष आनन्द नहीं आया । भोजनोपरान्त एकान्त में गोपिका से कहा, बेटी । यह क्या चरित्र हुआ मेरी समझ में कुछ नहीं आया । गोपिका सजल नेत्र करके बोली—

गीत

बाबा बोलो राधेश्याम ।

भव सागर के हेतु यही देगा केवट का काम ॥

पार जाऊँ यमुना मैया के नित्य सवेरे शाम ।

इसी नाम की नौका पै चढ़; आऊँ अपने धाम ॥

जिसने दिया ‘बिनीत’ मन्त्र मय प्यारा प्रभु का नाम ।

उस सद्गुरु के पद पद्मों में बारम्बार प्रणाम ।

बाबा बोलो राधेश्याम ॥

पंडित जी ने प्रश्न किया कि—“वह सद्गुरु कौन है ?” गोपिका चरणों में गिरती हुई बोली—“आप ही तो हैं ।”

पंडित जी ने कहा कि—“नहीं तू ही गुरु है ।”

गोपिका ने कहा कि—“आपने व्यासासन पर बैठ कर मेरे से अनेक पतित प्राणियों को पार किया है और कई एकां को करते रहेंगे, इसलिए आप ही सच्चे गुरु हैं ।

पंडित जी ने कहा—‘तू व्यास गद्दी पर बैठने वालों की भी गुरु है। मैं तो निरा पोथी पांडे ही रहा, तू ने अपने दृढ़ विश्वास से आनन्द कन्द का नाम जप कर अगम यमुना जल को सुगम पथ बना लिया और मैं घोंघा बसन्त की तरह तेरे साथ डूबता, उछलता चिल्लाता हुआ पार हो सका। मुझे रह-रह कर यही शंका हो रही है कि उस जल में तेरी तो पैर की एक भी उँगली न भीगी और मैं गोते खा-खा कर पार हुआ। गोपिका हाथ जोड़ कर कहने लगी कि ‘गुरुदेव’ ! क्षमा कीजियेगा। जब आप जल में प्रवेश करने के पहले अपनी घोती सम्हालने लगे, उसी समय मैं समझ गई थी कि आप समा में मन्त्र केवल सुनाते हैं। उस मन्त्र पर न तो आपको स्वयं दृढ़ विश्वास ही है, और न उसका आप जाप ही करते हैं।

आपको जो कष्ट हुआ वह इसलिए कि आपने पहले मुझे अपने शरीर का बल दिखाया, बल पूर्वक हाथ को छुड़ाना चाहा था। मला, मैं आमन्त्रित ब्राह्मण को बिना भोजन जिमाये कैसे लौटा देती ? जब आपके तन बल ने काम न दिया तब आपने धन बल का प्रलोभन दिया। इसके पश्चात् अपने प्रतापी पुत्रों का भय दिखलाया। जब आपके समी बल बेकार हो गये तब धबड़ाने लगे थे उसका यही कारण था।

सवैया—तन कौ धन कौ सुत सन्तति कौ,
अभिमान भरे अपने मन में।
जबलौ लिपटौ जग लम्पट सौ,
तबलौ लहरों की लपेटन में।
भय भीत रहे भव सागर में,
जब लौ भ्रम है भय भंजन में।
यदि प्रेम प्रतीत करे प्रभु में,
जन कबों न ‘बिनीत’ तरै जन में।

अब आपके सांसारिक सभी प्रकार के बल पराजित हो चुके थे तब निर्वेल बनकर आपने एक बार पुकारा था कि—‘उबारो राधावर घनश्याम’ उसी समय पार हो गये। पंडित जी ने कहा—“बेटी तुम्हें यह भयहारिणी कृपा कहीं से प्राप्त हुई ?”

गोपिका ने कहा—आपके ही मुख से कथा में राघेश्याम मन्त्र दूर खड़े-खड़े ग्रहण किया था। और आपकी कही हुई चौपाई के अनुसार दृढ़ विश्वास के साथ जाप करके अपना हृदय बनाया। वह चौपाई कौन-सी है।

मन्त्र जाप मम दृढ़ विश्वासा ।

पंचम भजन सौ वेद प्रकासा ॥

बोलिये भक्त वत्सल भगवान की जय ।



छूठ दम सील बिरति बहु करमा ।

निरत निरन्तर सज्जन घरमा ॥

महाराष्ट्र प्रांतांतर्गत घामन ग्राम में मनकोजी बोघला पटेल थे, उनकी पत्नी का नाम कमला देवी था। दोनों प्राणी बड़े ही सदाचारी, उदार थे। घर घन-धान्य से सभी प्रकार सम्पन्न था। बोघला जी बड़े दयालु और सन्त स्वभाव के थे। आप एकादशी व्रत किया करते थे। प्रत्येक कार्तिक शुक्ल एकादशी को प्रति वर्ष पंढरपुर सपत्नीक पहुँचते थे। वहाँ रात्रि में जागरण करते हुये सामर्थ्य ब्रह्म दाम संकीर्तन

करते थे और दूसरे दिन एक सौ एक ब्राह्मणों को भोजन करा के प्रसाद पाते थे ।

देश में दो वर्ष अनावृष्टि होने से घोर दुर्मिक्ष पड़ा । सहस्रों दीन हीन मनुष्य अन्न के बिना मरने लगे । बोधला जी ने अपनी स्त्री से कहा कि— कमला ! आज दरिद्रों और दुखियों के भेष में नारायण ही हमसे सेवा चाहते हैं । तुम आज्ञा दे दो, तो इन भूखे प्राणियों की प्राण रक्षा के लिये भण्डार खोल दिया जावे । देवी ने बड़ी उत्सुकता से अपनी सहमति दे दी । फिर क्या था । भंडार खोल दिया गया । जिस प्रकार गुड़ पर चींटी का दल टूट पड़ता है, उसी प्रकार मरणासन्न मानवों का तांता लग गया । बोधला जी ने दरिद्र नारायण की सेवा में अपनी चल-अचल सम्पत्ति यहाँ तक लुटाई कि रहने का विशाल भवन भी बेच दिया । आप स्वयं मजदूरी करने लगे ।

कार्तिक शुक्ल एकादश आई, कमला ने विनम्र स्वर से कहा इस एकादशी पर संकीर्तन तथा भोज किया करते थे । अब की बार क्या होगा ?

बोधला जी ने कहा—मैं अकेला ही जाऊँगा, किसी तरह व्रत का नियम छोटे से रूप में निभा आऊँगा । एकादशी को पण्डरपुर जाते हुए बोधला जी ने सूखी लकड़ी मार्ग में संचित कर ली थी । वह बाजार में एक आने में बेच दी । जागरण के लिये घूपवत्ती और भगवान के लिये पुष्पों का प्रबन्ध कर लिया । रात्रि भर अकेले ही हरि नाम का जप करते रहे । प्रातःकाल पुनः वन से सूखी लकड़ी ले आये । जिससे चार पैसे प्राप्त कर सवा सेर आटा लिया, कृष्णा नदी के तट पर पहुँचे और किसी ब्राह्मण को भोजन कराने की प्रतीक्षा करने लगे ।

तीर पर बड़े-बड़े सेठों के भंडारे हो रहे थे जिनमें अनेकों ब्राह्मणों को नाना प्रकार के मिष्ठान्त-पकवान जिमाये जा रहे थे । बोधला जी अपने मन्त्र

में सोचने लगे—क्या ? आज मेरे इस सूखे पिस्तान को कोई ब्राह्मण स्वीकार न करेगा ! क्या मेरा आज नियम भंग हो जायगा प्रभु ?

गीत

अब राखो राम लाज निज जन की
करत रहो प्रति व्रत के ऊपर सेवा मैं विप्रन की ॥
बरस रही पत्तल पर, सम्पत्ति श्रीमन्तन की ।
कौन करै स्वीकार भीख, रुखी सूखी निर्धन की ॥
अश्रु पूर्ण नेत्रों से वह चारों ओर किसी भीख ग्रहण करने वाले को
सजो रहे थे ।

कवित्त

दीन-हीन शबरी के जूठे तथा सूखे बेर,
भूखे जिमि बेर, बेर मांगि लाते हैं ।
सन्मुख सत्यभामा आदि प्यारी पत्नीन के जो,
झीन कर सुदामा के तन्दुल चबाते हैं ।
मानी महीप गृह 'विनीत' मेहमानी त्याग,
दिये बिदुरानी के छिलकों में अघाते हैं ।
वे ही भगवान आज बृद्ध विप्र वेष धर,
भक्तवर बोधला की भीख अपनाते हैं ।

अति दुर्बल एक ब्राह्मण फटी साफ़ी लपेटे लाठी के सहारे भक्त के आगे
खड़े हुए कहने लगे कि—“अरे भगत ? तेरे पास है कुछ ?” बोधला जी को
बड़ा हर्ष हुआ, सकुचाते हुए सूखे आटे को साफ़ी लपेटे लाठी के सहारे आगे

ग्रहण कर लिया । बोधला जी चाहते थे कि ब्रह्मदेव मेरे आगे ही मोजन बना कर पा लेवें । किन्तु कहीं कैसे ? कहने लगे—

दो०—अन्तर्यामी जानते, अन्तर के उद्गार ।

अब क्या बैठा देखता, खोज औपलै चार ॥

थकित भयौ तन अब कहीं बल न सकूँ पग एक ।

यहीं बनाऊँ बाटिबाँ व्यापी लुधा विशेष ॥

अब तो बोधला जी बड़े प्रसन्न हुए, मानो उन्हें इच्छित वरदान मिल गया हो । दौड़ते हुये गये, कहीं से कण्डे ले आये । चौका लगाकर भ्रंगीठी तैयार कर दी । पास में थाली तथा तवे का अभाव हृदय में खटक रहा था भगवान तो सब जानते हैं, क्या हुआ ।

छप्पय

विश्वम्भर भगवान भक्त हित में अनुरागे ।

पाथर पर पिसान निज कर सौ स्नानन लागे ।

चौंके चतुरानन पंचानन नयन उधारे ।

कांप गई कमला, कमलापति कहाँ सिधारे ॥

कहुँ 'विनीत' जन निघन ने बांधि किये त्रिभुवन धनी ।

रमा चली बैकुण्ठ तज बन के वृद्धा ब्राह्मणी ॥

चन्द्रमामा नदी के माग्यशाली तट पर भक्त बोधला ने देखा कि श्वेताम्बर धारण किये महान् वृद्धा एक ब्राह्मणी दूर से देखती हुई, हमारे अतिथि वृद्ध ब्राह्मण से कह रही है कि—क्या यजमान का नेवता आप अकेले ही पाना चाहते हो ? वृद्ध विप्र ने मधुर मुस्कान से कहा, कि—

देवी जी ! आप भी आइये । अपने हाथ से भोजन बनाइये; आप पाइये और मुझे भी पवाइये तब तक मैं इस वृद्ध की छाया में विश्राम कर लूँ ।

जिन भक्तों का भगवत के हित, तन-मन-धन अर्पण होता है ।

उनके अर्पण के कण-कण में, कैसा आकर्षण होता है ॥

श्रीपति सीधा सप्रहँ रसोई बपै स्वयं श्री महारानी ।

थे अतरिक्त पाने प्रसाद, चल पड़े सिद्ध ज्ञानी ध्यानी ॥

छिपे हुये देव, सिद्ध साधु वेश में एक-एक आने लगे । भैया ! हम भी भोजन करेंगे । अम्बा ! हमको भी प्रसाद मिलेगा ? इस तरह से चारों ओर से चिल्लाते हुए सन्त महात्मा बैठते जा रहे थे । विचित्र दृश्य था । किसी ने संकोच छोड़ दिया था । कोई सकुचा रहा था और कोई मुस्करा रहा था ।

सवैया

मुनि सिद्ध तपोनिधि त्यागी बड़े, अनुरागी अनेकन आने लगे ।

हुइ मूरत को, न भंडार रही, मनको मनमें सकुचाने लगे ॥

इक साक के पात में तृप्ति करें, सब सष्टि की वे मुस्काने लगे ।

जननी के करों से 'विनीत' बनी बटियाँ सुत प्रेम से पाने लगे ॥

जैसे किसी गरीब माता के अनेकों भूखे बच्चे चूल्हे को घेर कर बैठ जाते हैं और स्नेहमयी माता उनकी ओर रोटियाँ क्रमशः देने लगती हैं ठीक वही दृश्य तैयार हुआ । बोधला जी मन में शरमा रहे थे कि मेरा पिसान तो एक ही पेट के लिये पूरा नहीं था, हे भगवान यह क्या अशान्ति आ गई । वह नेत्र बन्द किये हुये प्रभु से प्रार्थना कर रहे थे और उनके कान माता के यह शब्द सुनने की प्रतीक्षा में लगे थे, कि 'भागो' अब मेरे पास भोजन नहीं

है । परन्तु तृप्ति की डकार के साथ जब सन्तों द्वारा जय-जयकार सुनाई दी । बोधला जी ने नेत्र खोल दिये सब अन्तर्धान हो गये थे ।

पत्तलों पर केवल प्रसादी पड़ी थी । बोधला जी ने प्रथम सन्तों की पत्तलों का प्रसाद पाया तो उन्हें इस संसार से घृणा होने लगी । पुनः रसोई बनाने वाली बृद्धा माता की पत्तल पर पहुँचे, तो चारों ओर रत्नों की खानें दिखाई देने लगीं, और जब बृद्ध विप्र की पत्तल का प्रसाद पाया तो इनके हृदय के नेत्र खुल गये ।

शरीर में रोमांच हो आया । नेत्र सजल हो गये, और वह समझ गये कि आज इस दीन-हीन का आतिथ्य दीनानाथ ने ही श्री जगत मैया सहित पधार कर स्वीकार किया है ।

अधिक क्या लिखें । 'सोइ जानइ जेहि देहु जनाई' और वह जानना कब होता है ।

छठ दम सील विरति बहु करमा ।

निरत निरन्तर सज्जन धरमा ॥

“बोझिये भक्त वत्सल की जय ।”



‘सातव सम मोहि मय जगदेखा’

श्री नारायण स्वामी जी का इसी उपासना पर एक दोहा प्रचलित है ।

दोहा--नारायण जाके हृदय, सुन्दर श्याम समाय ।

डार-पात, फल-फूल मैं श्यामहि श्याम दिखाय ॥

बराबर विश्व में भगवान की भाँकी देखने वाले सुख, दुःख में प्रभु कृपा का अनुभव करने वाले भक्त नामदेव की कुटिया ग्राम से पृथक् कुछ ही दूर स्थित थी। एक दिन आप किसी दूसरे ग्राम में भिक्षा करने गये थे। सन्ध्या समय न जाने कहाँ से और कैसे कुटिया में आग लग गई। आकाश में उठता हुआ धुआँ देखकर गाँव वाले दौड़ पड़े।

घास-पात की कुटिया में अग्नि पूर्णरूप से प्रज्वलित हो चुकी थी। उसको बुझाना असम्भव था। गाँव के सरपञ्च ने कहा अगर जलती हुई कुटिया में साधु का कुछ सामान बचा सकते हो तो उठा लाओ, जिससे जो हो सके, सो जी जान से उपाय करके बेचारे का सामान निकाल लाइये।

सरपञ्च की ऐसी बात सुनकर जोशीले नौजवान जल्दी से उस जलती हुई ज्वाला में कूद पड़े। कोई अघजला कमण्डल, कोई आटे की मटकी, कोई मृग चर्म, कोई कम्बल और कोई घी का बर्तन लेकर भागा। उसी समय नामदेव भी आ पहुँचे। कुटिया को जलती हुई देखकर कहने लगे।

द्वेष देश में नहीं किसी से पावक रही न भौन।

दीन हीन की कुटिया के, जलने का कारण कौन ॥

मेरे इस तुच्छ संग्रह पर किसी भी संसारी मनुष्य को, ईर्ष्या नहीं है। मैं कभी भी चसं, सुलफा इत्यादि का सेवन नहीं करता जिससे कुटिया में आग रहती हो, फिर देर तक एक टक देखते हैं।

प्रेमी पुरवासी घर धाये बुझती नहीं बुझाये।

अग्नि रूप में नारायण की आराधना कर अपने ना

विनाशकारी अग्नि की ज्वाला में भी भक्त ने भगवान के दर्शन पाये ।
प्रेम से नाच-नाच कर कीर्तन करने लगे—

कीर्तन—श्रीमन्नारायण नारायण नारायण ।

भज मन नारायण नारायण नारायण ॥

देश काल दिशि विदिराहु माहीं ।

कहुहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं ।

अग जग मय सब रहित बिरागी ।

पेम से प्रकट होंहि जिमि आगी ॥

नारायण नारायण नारायण ॥ भज० मन० ॥

नामदेव जी निकाली हुई सामग्री प्रसन्नता से को एक-एक करके अग्नि में फेंकने लगे । यह चरित्र देखकर ग्रामवासियों को बड़ा क्रोध आया । वह कहने लगे कि—“हमने तो परिश्रम करके जलती हुई आग में से निकाला था, इस मूर्ख ने फिर उसी में डाल दिया । ऐसा बावला वैरागी अपनी बस्ती में न रहना चाहिये, इसे कैसे भगाया जाय ? मुखिया ने उत्तर दिया कि इसकी कुटिया बनाने के लिये कोई काँस या बाँस न देना ! अपने आप भाग जायगा । बस, न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी ।

माघ मास की ठंडी की रात्रि थी । एक ओर कुटी जल रही थी दूसरी ओर नामदेव सुख की नींद निमित्त मैदान में पड़ रहे । ग्राम निवासी अनेक प्रकार की बातें करते अपने घर जा रहे थे । किसी दयायु हृदय मानव ने कहा कि पेचारा खुले में पड़ा है । कोई फटा-पुराना कम्बल दे दो । नहीं तो रात्रि में ठंड लगने से मर जायगा । सरपच्च ने कड़क कर कहा । दया निधान चप रहो, अगर दया वश इसे कुछ ओढ़ने को दिया, तो फिर रह

जायेगा । यदि शीत से मर भी गया तो जलती कुटिया में फेंक देंगे और सूचना कर देंगे कि कुटिया में आग लगने से उसी में जल गया । और पृच्छने वालों को हम सब प्रमाण देंगे ।

किसी पिता का अबोध बालक ठंडी के समय मैदान में पड़ा हो जिसका कोई सहायक न हो, उसके पिता के हृदय में ही वेदना होती है । जानते हो, सन्तों का पिता कौन है ?

दोहा—राम सु संतन के पिता; संत राम के पूत ।

सन्त न होते जगत में, रहते राम निपूत ॥

करबट लै सिसकी भरी, व्यापी तन में शीत ।

काँप गये प्रभु द्वारकाधीश भये भय भीत ॥

घनाक्षरी—चौंक परिहरोँ रनिवास को बिलास दास,

दास को शरीर परौ शीत सों बचावने ।

(श्री रुक्मिणी जी ने कहा आप ऐसे क्यों घबरा गये ! आपके दासों के प्रति मानव मात्र में सेवा की भावना है । कोई ओढ़ने को वस्त्र दे देगा । अथवा अग्नि जला कर ही शीत निवारण कर देगा । भगवान् श्याम सुन्दर कहने लगे ।)

मेरो पिय भक्त ताहि बाबरों 'बिनीत' जान ।

निपट बिसारों गरब के सब गांव ने ॥

(रानियाँ दासियों सहित कहने लगीं सरकार ! अभी तो रात्रि है । प्रातः एक कुटिया का सामान किसी गाड़ी पर लदवा कर भेज दीजियेगा । चिन्तित भाव से प्रभु ने कहा)---

गाड़ी बैल भैंसा खर खच्चर को खोजूँ कहाँ,
छानी और छप्पर लै गरुड़ पै लदावने ॥
क्षमियो रुक्मिणी आज छोड़ के तुम्हारे धाम,
भक्त नामदेव जू की छानी मोहि छावने ॥

श्री रुक्मिणी जी ने कहा तो फिर अपने अर्द्धांग को क्यों छोड़ रहे हो ?
मैं भी साथ ही चलूंगी । अब वहाँ पर शंका होती है ? पूज्य श्री गोस्वामी
जी ने लिखा है—

“लव निमेष मँह भुवन निकाया,
रचै जासु अनुसासन माया ॥”

जिसकी माया निमेष मात्र में अनेकों ब्रह्मांड का सृजन कर सकती है,
वह स्वयं क्यों भागे ? किसी भी सेवक से कह देते, आँख का संकेत करते
ही कूटिया तैयार हो जाती ।

दो०—करते भृकुटि बिलास में, सेवक हित चित चाव ।
प्रगट न होतौ जगत में, भगत बछल कौ भाव ।

रात्रि का पिछला पहर ही शेष है । प्रतः होने के लक्षण स्पष्ट ही रहे
थे । नामदेव का शरीर ठंड के मारे तो, (९) का सा शंक बना हुआ जिस
स्थान पर सुषुप्त अवस्था में पड़ा था; वहीं पर शीघ्रता से कूटिया का निर्माण
होने लगा ।

नटवर नन्द किशोर कांस कुटिया पर छावें ।

करमें रसरी लियें रुक्मिणी बांधत धावें ॥

जोई जोई मागें वस्तु स्वगति सों गरुड़ गहावें ”

विश्वम्भर की रची कुटी कैसे कवि गावें ॥

रहै विनीत नाभाश्रयी नामदेव तेहि रात ने ।

नाम जपत प्र भु कौ जगे कुटिया भीतर प्रात में ॥

भक्त वत्सला माता रुक्मिणी जी नामदेव को एक सुन्दर शाल शीत निवारणार्थ ओढ़ा गई थीं जागते ही भक्त प्रवर ने उस दुशाले को देखा, पुनः ऊपर-नीचे दृष्टि डाली तो विचित्र मनमोहक कुटिया को देख कर बड़े प्रसन्न हुए प्रेम से पुलकित होकर नारायण नारायण स्मरण करने लगे ।

उस कुटिया के तृण पातों की विचित्र मन मुग्धकारी, स्वास्थ्य वर्द्धक सुगन्ध, पवन के साथ ग्राम के घर-घर में प्रवेश कर रही थी । ग्राम निवासी स्त्री, पुरुष नास्तिका के सहारे चोटों की भाँति कुटिया की ओर दौड़ने लगे । चारों ओर से भीड़ में आवाज आ रही थी कि इसी बंगले से सुगन्धि आ रही है । प्रश्न हुआ तुम्हारा यह बंगला किसने बनाया है । नाम देव ने कहा कि— मैं तो सोता था कोई आये तो अवश्य ये, वही बना गये । पुनः प्रश्न हुआ तुमने उन्हें मजदूरी में क्या दिया । नामदेव ने कहा कि—कुछ नहीं, वह तो प्रेम से बना कर चले गये । कई एक कहने लगे कि—बाबा ! उन्हें फिर से बुलवाइये हम इससे बड़ा बंगला बनवायेंगे । उन्हें उचित मजदूरी देंगे ।

मुखिया ने कहा हम एक बगीचे में और दूसरा बस्ती में बनवा लेंगे। तुम उन्हें जल्दी बुलवा लो कई महीने का काम मिलेगा। नामदेव हँस कर कहने लगे।

दो०—बनव न लगै विलम्ब कछु, जगै भूमि कौ भाग।

प्रथम लगावै तो कोई अपने घर में आग ॥

साधु के मुख से ऐसे वचन सुनकर सब शर्मा गये : नामदेव ने कहा कि आप लोगों का यही घर में आग लगाना है कि चराचर विश्व में सम्पत्ति, विपत्ति में प्रभु की कृपा का रूप देखो। और इसी प्रकार उस परम पिता के अनन्य उपासक बन कर उसे प्राप्त करो। यही प्रभु का सन्देश है।

सातवँ सम मोहि मय जग देखा।

बोलिये प्रेम से भक्त वत्सल भगवान की जय।



मोहिते अधिक सन्त करि लेखा।

पवित्र मानस मनहारिणी भूमि रामवन में एक वयोवृद्ध साधक श्री
 पं० दीनानाथ जी कुटिया नम्बर ३ में रहते थे। वृद्धि होने के नाते वहाँ के
 सभी साधक उन्हें चाचा जी कहा करते थे। आप देहली के रहने वाले

विद्वान और अनुमयी पुरुष थे । आपने उसी प्रान्त की एक सत्य घटना सुनाई थी ।

ग्राम से दूर नदी किनारे वन में एक मन्दिर था । वहाँ के भगवान श्री विपिन बिहारी के नाम से प्रसिद्ध थे । पुजारी भक्त तथा सद्गृहस्थ थे । उनकी पत्नी तो परछाई की तरह पुजारी जी की सेवा में रहा करती थी । उसका नाम था सुमति कुमारी, नदी के उस पार एक वृद्ध सन्त कुटिया बनाकर रहते थे । कभी-कभी मन्दिर में भगवान के दर्शन करने आया करते थे ।

आश्विन की नवरात्रि का प्रथम दिन था । कुटिया वाले महात्मा रात्रि में नदी पार करके आ रहे थे । बरसाती पानी से घाट कट गया था । उसमें गहरा गड्ढा हो गया था । वृद्ध महात्मा का पैर फिसला और 'हा राम' कहते हुए गड्ढे में जा गिरे ।

इधर मन्दिर में आरती हो रही थी । किसी आये हुये दर्शक ने कहा कि—बूढ़े बाबा जी घाट के गड्ढे में गिर पड़े हैं, उठ नहीं पाते । जहाँ पुजारी के कान में यह शब्द पहुँचा, वहीं से अघूरी आरती छोड़ कर घाट की ओर भागे । कोई-कोई दर्शक पुजारी की इस मूर्खता पर विगड़ रहे थे । "भगवान की अजूरी आरती छोड़कर चल दिया कैसा पुजारी है ।" गड्ढे से निकाल कर सन्त को पुजारी मन्दिर में ले आये । गिरने से भ्रंगों में जहाँ जहाँ चोट थी वहाँ-वहाँ अग्नि से सँक कर शान्त किया । प्रातःकाल वृद्ध सन्त जाते हुये कह गये कि अब मैं शरद् पूर्णिमा को दर्शन करने आऊँगा ।

आश्विन शुक्ल चतुर्दशी को रात्रि में शयन आरती हो चुकी थी ।

पुजारी ने पत्नी से कहा कि कल पूर्णिमा के दिन भगवान के दर्शनों को बूढ़े

बूढ़े बाबा जी आबेंगे। उनके मार्ग में नदी का घाट कट गया है। हम तुम दोनों ही उसे ठीक करेंगे। भक्तों की सेवा से ही भगवान प्रसन्न होते हैं।

‘मानत सुख सेवक सेवकाई’

पुजारिन ने अपनी स्वीकृति दे दी। आज शरद पूर्णिमा है। मन्दिर के चारों ओर वन में गोपबालक गीयें चरा रहे थे। आपस में कहते थे कि आज शरदोत्सव है। हम सबों के घरों से दूध आया है। रात में खीर-पूड़ी का प्रसाद बँटेगा।

इधर मंगलारती करके पुजारी ने कन्धे पर कुदाल और पुजारिन ने टोकरी ली। दोनों घाट की ओर चल दिये। पुजारी घाट से कुछ दूर मिट्टी खोद रहे थे। पुजारिन टोकरी में मिट्टी भर-भर कर गढ़े में डालती जाती थी। सबेरे के दस बज गये थे। मध्याह्न के सूर्य का प्रखर तेज शरीर को जला रहा था। पुजारिन गर्भवती थी और इसी मास में प्रसव की सम्भावना भी थी। इसके कष्ट का ध्यान न करते हुए पुजारी कह रहे थे कार्य के साथ-साथ राधेश्याम, राधेश्याम संकीर्तन भी करती जाओ। पतिव्रता पति की आज्ञा पालन करती जाती थी किन्तु थोड़ी देर बाद उसका मुख सूखने लगा जिससे संकीर्तन जप के रूप में रह गया।

काम करत तन से मन से सहत दुख,
मुख से जपत नाम श्याम यदुवीर की।
देखो ‘विनीत’ शीघ्र सती को सहायक बन,
बन से सिधायो एक बालक अहीर की॥

टोकनी उठाई ठानी काम कौ न डौलो कहूँ,
 बानी मधुर बोली हरैया पर पीर कौ ॥
 मैया घर जाओ पै समैया पै रखियो ध्यान,
 दिवैंयौ प्रसाद मोहि पूरी और खीर कौ ॥

पूजारिन चली गई। और बालक उसके स्थान पर मिट्टी डालने लगा। पुजारी थक गये थे, कमर सीधी करने को खड़े हुए तो पीछे दृष्टि डाली।

दोहा—दृष्टि पिछारी परत ही, हुये दोउ द्रग लाल।
 पतनी के शुभ काम को, करत विलोकौ ग्वाल ॥

क्रोध से पुजारी का शरीर कांपने लगा। बालक पर विगड़े और उसे मारने के लिए दौड़े।

कवित्त

आयौ कहां ते मूढ़ मारग बनावन हेत,
 सुकृत बटाये लेत सुमति कुमारी के।
 दाँत कट कटात गारी देत पिछारी परे,
 तजु के कुदारी कहैं जात कहां दारी के।

(बालक भागा और मन्दिर में प्रवेश कर गया। जिस आसन पर बैठकर पुजारी दर्शकों को चरणामृत देते थे। उस पर टोकनी पटक दी।) और

वह बालक परदा हटाकर निज मन्दिर में घुस गया । पुजारी जी क्रोध से भरे हुए उसके पीछे ही चले आ रहे थे । जो यह हाल देखा तो ओर भी आग बबूला हो गये ।

मन्दिर में प्रविशो 'विनीत' जू विचित्र बाल,
देख के चरित्र चलु चकित पुजारी के ।
आसन पै टोकनी सिंहासन पै माटी पड़ी,
अंगन पै धूर चढ़ी बिपिन विहारी के ॥

अब तो पुजारी का क्रोध आंसू बन कर बहने लगा । वह गद्गद् कंठ से कहने लगे ।

गीत

ऐसा चरित्र सुना नहि देखा ।
कौन करै परतीत सुनाऊँ ॥
रीत कृपा की रेखा ।
ऐसा चरित सुना नहि देखा ॥
बलि जाऊँ करुणाकर चित्त की ।
दीन दशा यों मेरे हित की ॥
प्रकट हो गई आज पतित की ।
कौन पाप की रेखा ॥ ऐसा० ॥

पुजारी जी अपना माथा पीटते हुए कह रहे थे कि मेरा कौन सा पाप उदय हो गया जिसके कारण भगवान को इतना कष्ट हुआ । हाय ! हाय !

यह मोर मुकुट धूल धूसरित हो गया । क्या यह पीत पट मिट्टी में सनने योग्य है ? मैं महान् अधम पापी हूँ । उसी समय मन्दिर में आवाज सुनाई दी ।)

पूर्ण पुण्य जागा तुम दोहिते,
भक्ती सफल सातवीं तोहिते ।

(वह कौन-सी भक्ति)

बन 'विनीत' सेवा में मोहिते'
अधिक सन्त कर लेखा ॥ऐसा॥

ऐसा शब्द सुनकर पुजारी जी अपनी स्त्री सहित मन्दिर में प्रसन्नता से नाचने लगे ।

(बोलिये भक्त वत्सल को जय)



“आठवें जथा लाभ सन्तोषा ।
सपनेहुं नहि देखइ परदोषा ॥

गीत गोविन्द के रचयिता महात्मा जयदेव जी किसी भाग्यशाली राजा का आतिथ्य सत्कार स्वीकार करके उसके यहाँ महीनों रहे । जब जाने लगे

तब राजा ने भेंट में इन्हें बहुत सा द्रव्य देना चाहा, तो श्री जयदेव जी ने कहा ।

दोहा—द्रव्य दान दीजे वहाँ जहाँ करे कल्याण ।

त्यागी को धन दार है माहुर मृत्यु समान ॥

फिर भी राजा ने हठ करके उन्हें एक बहुमूल्य रत्न भेंट में दे ही दिया । समा में चार ठग बैठे हुए यह सब देख रहे थे । वह चारों महात्मा के पीछे लग गये ।

जब जयदेव उस राज्य सीमा से निकल कर दूसरे राज्य की सीमा में घोर वन में पहुँचे, तब उन चारो ठगों ने उन पर आक्रमण कर दिया । चोर यदि महात्मा जी से रत्न माँगते, तो वह तुरन्त ही दे देते किन्तु उन दुष्टों ने रत्न छीन कर उनका एक हाथ तथा एक पैर का अग्र भाग काट कर एक अवे कुँए में डाल दिया । भगवत की कृपा से उस कुँए में थोड़ा ही जल था । उसी में एक शिला पड़ी थी । जयदेव हरि इच्छा समझ कर उसी शिला पर बैठ गये और प्रेम से गीतागोविन्द के पद गाने लगे । जिस राजा के राज्य में वह वन था, दैवयोग से वह राजा इस वन में शिकार खेलने आया हुआ था ।

किसी शिकारी को कुँए से मोहक गायन सुनाई दिया । उसने राजा से कहा कि महाराज ! उस अन्व कुँए में कोई गा रहा है । थोड़ी ही देर में कुँए पर मनुष्यों की भीड़ लग गई । राजा ने इन्हें बाहर निकलवाया और रुधिर से सने हुये तेजस्वी साधु से प्रश्न किया ।

आप कौन हैं ? उत्तर मिला कि—“मुझे जयदेव कहते हैं ।” राजा उन्हें प्रणाम करके सम्मान पूर्वक राजधानी में लाया । राजवैद्य द्वारा उनकी

यथावत् चिकित्सा होने लगी। श्री जयदेव जी के हाथ-पैर की उँगलियाँ न रह कर केवल ठूँठ रह गये थे। अब कोई पीड़ा न होती थी, राज परिवार उनकी सेवा किया करता। कई सौ रुपया राजा नित्य भेजा करें कि महात्मा जी इन्हें किसी धर्म कार्य में लगावें। परन्तु जयदेव जी सदा लौटा देते और कह देते कि मुझे जब आवश्यकता पड़ेगी तब ले लूँगा।

कुछ दिन पश्चात् राजा ने एक यज्ञ किया जिसमें सहस्रों मनुष्य दूर-दूर के देशों से एकत्र हुये। वह चार चोर भी उस यज्ञ से आये थे। साधु भेष में होने के कारण उन्हें भी सन्तों के समीप आश्रय मिला। शहर के बाहर एक चौरस मैदान में साधुओं के लिये पृथक्-पृथक् कुटियाँ बनीं थीं। उनमें क्रमानुसार नम्बर पड़े थे। प्रबन्धक उन्हीं नम्बरों के अनुसार किस साधु को नित्य प्रति कितनी सामग्री चाहिये यथा विधि से सेवा किया करते थे। एक दिन राजा के साथ जयदेव महात्मा सन्तों के दर्शनार्थ सन्त निवास में आये। सभी महात्माओं के दर्शन करते हुये लँगड़ाते-लँगड़ाते श्री जयदेव जी उन धूर्तों के पास पहुँके जो साधु बने बैठे थे। चोरों ने इन्हें पहचान लिया और इन्होंने चोरों को पहचाना। उन चोरों की साधु भेष में देखकर श्री जयदेव जी बड़े प्रसन्न हुये। वह चारों इन्हे राजा के साथ देखकर कुछ मयमात से हो गये। महात्मा ने उनसे कुछ न कहा, आये चल दिये, अन्य सन्तों के दर्शन करके राज भवन में आये। आते ही राजा से कहा कि राजन् मेरे चार साधु मित्र यज्ञ में आये हैं। उनका भली भाँति स्वागत किया जाय। राजा हाथ जोड़ कर कहने लगा कि भगवान आप आज्ञा दीजिये उनकी क्या-क्या सेवा की जाय? महात्मा ने सोचा कि उन चोरों को बहुत द्रव्य दिलाऊँ जिससे वह चोरी करना छोड़ दें। राजा से कहा उन्हें यही बुलाकर अधिक द्रव्य देकर बिदा कीजिये। आज्ञा शिरोधार्य कहकर राजा अपने राजमहल में आया। तुरन्त दो सिपाहिनों को आज्ञा दी कि 'अमुक नम्बर की कुटी में चार साधु ठहरे हैं; उन्हें सम्मान पुष्पक राज भवन में ले आओ।' सशस्त्र सिपाही कुटी पर पहुँचे। प्रार्थना की महाराज! आपका राजमहल में बुलावा है।

अब तो चारों चोर समझ गये कि उस लंगड़े ने सब पोल खोल दी। आँखों के आगे मृत्यु नाचने लगी। भाग भी नहीं सकते थे। लाचार सिपाहियों के साथ चल दिये।

राजा ने पहले ही चार सिंहासन सजा रखे थे। आते ही उन्हें आदर से बिठाया। चोर पहले तो घबड़ाये, मगर सेवाभाव देखकर कुछ धैर्य हुआ। राजा ने रानी से कहा अपने शृंगार के हीरा जवाहरात के हार तथा अन्य रत्नों को लाकर महात्माओं के चरणों में अर्पण करो। बात की बात में रानी ने अपने शृंगार को पिटारियाँ खोल के साधुओं के आगे रख दीं।

राजा ने विनम्र शब्दों में प्रार्थना की महात्मन् ! जितना द्रव्य चाहिये सहृदय ले जाइये क्योंकि आप मेरे महात्मा के मित्र हैं। उनकी ही आज्ञा से यह सेवा कार्य किया जा रहा है। वह एक दूसरे का मुँह ताकते हुए रत्न जवाहरातों की गठरी बाँधने लगे। उसी समय जयदेव जी आये उन्हें गठरी बाँधते देखकर हृदय में सोचने लगे कि एक हीरे के पीछे तो मेरा एक हाथ और एक पैर बेकार हो गया। यह तो गठरी बाँध रहे हैं मगवन् इनका कोई अमंगल न हो जावे। उन्होंने राजा से कहा कि इनके साथ कुछ सशस्त्र सिपाही भेजिये। जिससे सन्तों को कोई कष्ट न हो सके। इन्हें यथास्थान तक भेज आवें।

राजा की आज्ञा से उनके साथ चार सिपाही एक हवलदार भेजने जा रहे थे। चारों चोर बड़ी प्रसन्नता से अपनी-अपनी गठरी लिये थे। जब गहन वन से निकल कर मैदान में आ गये चारों ओर किसान अपने-अपने खेतों में काम कर रहे थे। हवलदार ने चारों साधुओं से प्रश्न किया कि महाराज ! 'सम व्यसनेषु भवेत् मैत्रीः' गुण और स्वभाव मिलने पर ही मित्रता होती है।

फिर हमारे इन त्यागी महात्मा से और आप जैसे लालची सन्तों की मित्रता कैसे हो गई। छद्मवेशी साधुओं ने कहा कि "इस मित्रता में कुछ कारण है" सिपाही कारण जानने का उत्सुक हुए तो चोरों ने कहना प्रारम्भ किया 'हम चारों और तुम्हारा त्यागी बाबा किसी राजा के यहाँ नौकर थे। हम लोग उच्चपदाधिकारी थे। और यह अन्तःपुर में सेवा किया करता था। एक दिन रनिवास में इससे विशेष अपराध हो गया था जिससे राजा ने क्रुपित होकर इसे प्राण दण्ड की आज्ञा दी। वह रोता हुआ हमारे पास आया। हम लोगों ने दया करके छिपा लिया। केवल हाथ और पैर को उँगलियाँ काट कर राजा को दिखला दी। तभी से साधु हो गया, और यहाँ-वहाँ भ्रमण करता फिरता है। हम लोग भी राज पदों पर रह कर विलासिता से ऊब गये। सब त्याग कर साधु हो गये। अब जहाँ हम लोग उसे मिल जाते हैं वहाँ हमारा सम्मान करता है।

दोहा—सूर सिपाहिन ने सुनी. चोर कथा धर ध्यान।
 पै विरोध निज भक्त कौ, सह न सके भगवान् ॥
 सहसा ही धरती फटी, चारों गये समाय।
 रतन की गठरी परी, कछुक दूर पर जाय ॥

चारों चोर पृथ्वी में लीन हो गये। और सिर से सम्पत्ति की पोटरियों को जैसे कोई स्प्रिंग ने फेंक दिया हो, दूर जाकर गिरी पड़ी। सिपाही घबड़ा गये भगवान् ! यह क्या हुआ ? यदि हम इन पोटरियों को ले चलते हैं, तो प्रथम पुलिस बैसे ही बदनाम है। दूसरे हमारे ऊपर राजा रत्न निकालने का सन्देह करेगा।

खेतों पर से किसानों को बुलाकर चारों गठरियाँ उठावाई और राजा के पास आकर रोते हुए सारी घटना सुनाई। राजा को बड़ा दुःख हुआ कि

‘महार्मा जयदेव जी कहेंगे कि सिपाही रक्षा के लिए नहीं, वरन् इसलिए भेजे थे कि गठरी छीन कर वापिस लाना ।’

काँपते हुये राजा सिपाहियों के साथ महात्मा के स्थान की ओर चले । वे तो अनुभवी दूरदर्शी महात्मा थे । उन्हें मार्ग की घटना ज्यों की त्यों ज्ञात हो गई । ध्यानस्थ बैठे हुये अश्रुपात बहाते हुये कह रहे थे ।

गीत

हुआ हा दैव मेरे में, उदय दुष्कर्म वह कथ का ।
जो जीवन में न कर सकता किसी के काम मतलब का ॥
किया उपकार बना ‘बिनीत’ वह अपकार मेरे से ।
हुआ जिस पाप के कारण, वहाँ संहार उन सब का ॥

राजा ने ध्यान भंग करते हुये कहा कि महाराज ! उन्होंने ही तो आपके हाथ पैर काटे थे या और किसी ने ? उसी मुद्रा में विशेष आँसू बहाते हुये महार्मा ने उत्तर दिया ।

न धन के लोभ में पड़ता, न अंगों के बिना रोता ।
वो थे उसमें बहाना फल, मिला था मेरे करतब का ॥

राजन् वह तो सब मेरे लोभ के कारण हुआ था । न मैं वह रत्न लेता
न भंग-भंग होता । वह तो निमित्त मात्र थे ।

महात्मा यह सब कहे जा रहे थे । राजा ने देखा कि उनके एक हाथ और पाँव ज्यों के त्यों पहले की तरह दोनों सर्वाङ्ग पूर्ण हो गये । अति प्रसन्न होते हुये राजा ने कहा कि गुरुदेव ! अब कुछ शिष्य की भी प्रार्थना सुन लीजियेगा । आपने साधु का कर्म किया था कि उन ठगों के दोषों को न देखते हुये उन्हें अतुल सम्पत्ति सम्मान सहित दिलवाई । मैंने राज घर्म का पालन किया । आपकी आज्ञा मात्र पर अपनी रानी के अमूल्य आभूषण तक दे दिये ।

उधर उन नीचों ने—

(‘जेहि सन नीच बड़ाई पावा

सो प्रथमहि हठि ताहि नसावा ॥’)

अपना कार्य बाणी द्वारा किया । अपने उपकार करने वाले आप जैसे त्यागी सन्त की निन्दा । कर्मों का फल देने वाला तो परमात्मा है । आप अपने नेत्र खोलिए, देखिये आपका कर कमल और चरण दोनों प्रथम जैसे सुन्दर हो गये हैं । मेरा द्रव्य भी मेरे पास आ गया है । और उनके पाप से पृथ्वी माता मृत्यु का कारण बनी । आप आदर्श सन्त हैं ।

इस घटना से आपकी कृपा से मुझे यह अनुभव हुआ है कि सन्तोष से रहना ही संसार में सच्चा सुख है । मैंने कई बार आपके कर कमलों द्वारा धन का सदुपयोग करना चाहा । परन्तु आपको अपनी सादगी में ही परम सन्तोष रहा, उन दुष्टों के दुर्व्यवहार पर आपको किंचित खेद अथवा क्रोध नहीं हुआ । सन्त स्वभावानुसार उन्हें मित्रों की भाँति सम्मानित कराया । महाराज ! यह सेवक आप में उस भक्ति का प्रत्यक्ष दर्शन कर रहा है । (वह जोव भी भक्ति) ?

“आठवं जथा लाभ संतोषा ।

सपनेहु नहिं देखइ पर दोषा ॥”

बोलिये अनन्य भक्त और भक्तवत्सल भगवान की जय !



नवम सरल सबसन छल हीना ।

मम भरोस हिय हरष न दीना ॥

एक वृद्ध महात्मा ने मद्रास प्रान्त की घटना सुनाई थी । किसी ग्राम में श्री रघुनाथ जी का मन्दिर था । वृद्ध केवट जिसका नाम मोला था इसी मन्दिर में सेवा किया करता था । इसके दो लड़के दूर शहर में डाक घर में पोस्टमैन थे । मोला बड़ा ही सरल और निष्कपट था । भगवान का इतना भरोसा था कि कोई पूछे केवट दादा अमुक बात कैसे है ? तो कह दिया करे रघुनाथ जानें मैं तो कुछ भी नहीं जानता । प्रत्येक कार्य पर रघुनाथ जी की दुहाई दिया करे, बात-बात में रघुनाथ की शपथ किया करे ।

इसकी बेटी का विवाह था उसके निमित्त एक सेठ से दो सौ रुपये इसने उधार लिये । सेठ ने जो कुछ लिखाया लिख दिया और अँगूठे का निशान लगा दिया । विवाह हो जाने के कई महीने बाद दोनों लड़के इसके पास रुपया ले आये और बोले पिताजी सेठ का हिसाब करके रुपया दे आओ और रसीद ले आओ । वृद्ध केवट प्रसन्नता से रुपया लेकर सेठ के घर गया हिसाब लगाकर सेठ ने सूद समेत रुपया ले लिया । रसीद लिख चुके केवल सेठ के

पानी लेने गया इधर सेठ आखिर बीसवीं सदी का ही तो था। कुछ सोच-बिचार न करते हुए उसने लिखी हुई रसीद एक बही (रजिस्टर) में दबाकर रख दी और दूसरे कागज के टुकड़े पर कुछ लिखकर भोला को देते हुये कहा यह तुम्हारी रसीद है इसे लेकर घर जाओ। भगवान पर भरोसा रखने वाले बूढ़ केवट ने वही कागज प्रेम से ले लिया और मन्दिर में सेवा करने पहुँच गया।

दो तीन महीने बाद सेठ ने भोला के ऊपर ढाई सौ रुपया की नालिश कर दी। इसके नाम का सम्मन आया तो बोला क्या करेगा सेठ ? मैं कचहरी में उसकी दो हुई रसीद दिखाऊँगा।

तारीख पर सेठ तथा भोला केवट जज साहब के सामने खड़े हुये। जज ने प्रश्न किया क्यों केवट तुमने रुपया लिया है ? बोला हाँ हुजूर लिया था और दे भी दिया। उसी की यह रसीद मेरे पास है। भोला का दिया हुआ कागज जज साहब ने पढ़ा और बोले यह तो रसीद नहीं है कोई दूसरा कागज है। केवट के पास यही एक कागज था जिसे महीनों से सुरक्षित रखा था, काँप गया ? महाराज यह रसीद नहीं है ! तब तो मैं मर गया। जोर से रोने लगा जज साहब बोले रो मत, यह बता जब तूने रुपया दिया था तब कोई वहाँ मौजूद था ? केवट बोला कोन था ? रघुनाथ थे और कोई नहीं था ? साहब ने कहा रघुनाथ को तलब कराओ। केवट बोला महाराज तलब नहीं समझा। जज ने इससे पाँच रुपया लिये और पेशकार से कहा रघुनाथ के नाम सम्मन निकाल दो खुराक भेज दो।

जेष्ठ की दोपहरी में एक मुसलमान चपरासी ग्राम वासियों से पूछ रहा था यहाँ कोई रघुनाथ हैं ? 'यहाँ रघुनाथ नाम का कोई व्यक्ति नहीं है' रघुनाथ का मन्दिर अवश्य है। चपरासी कुछ विकल सा होता हुआ बोला मन्दिर ही सही घूप में परेशान हो रहा हूँ चलो एक आदमी राह बता दो किधर है ?

भगवान् मध्याह्न भोजनोपरान्त विश्राम सदन में थे पुजारी प्रमुख द्वार पर बैठे थे । आज मन्दिर में चपरासी को आते देखा तो कुछ घबराये से सशङ्कित होते हुये बोले आप इस ओर कैसे भूल पड़े ? चपरासी बोला यहाँ कोई रघुनाथ हैं उनके नाम का सम्मन है । पुजारी ने कहा लाओ ले लें, सिपाही ने कहा तो क्या आप ही रघुनाथ है ? पुजारी ने कहा हमें ही रघुनाथ समझिये । सम्मन पर तामील कर दी और खुराक भी साथ में आई थी प्रेम से लेकर चपरासी को विदा किया ।

मध्याह्न के पश्चात् मन्दिर के पट खोले और पुजारी प्रभु से प्रार्थना करके कहने लगे सरकार आप के सेवक वृद्ध केवट पर झूठा दावा हो गया है उसने साक्षी (गवाही) के लिये आपको अदालत की आज्ञा से तलब करवाया है (चरणों में रखते हुये) और दो रुपया खुराक (खर्च) को भेजे हैं । ज्यों-ज्यों तारीख समीप आ रही थी पुजारी जी के हृदय में हलचल बढ़ती जा रही थी और वृद्ध केवट तो अति चिन्तित था पानी मरा करै मन्दिर के बतन मला करे और गाया करे ।

गीत

प्रभु बिन संकट कौन निबारे ।

दीन बन्धु मैं दीन चरण तज जाऊँ केहि के द्वारे ॥संकट०॥

न्याय नीति सम्पति के बस हाकिम हुकम विचारे ।

या अनाथ की लाज आज रघुनाथ जू हाथ तुम्हारे ॥

॥प्रभु बिन०॥

पेशी की तारीख के एक दिन प्रथम पुजारी ने भोला से कहा तू कल कचहरी न पहुँचेगा आज ही से चल दे ? जिस दिन तारीख थी पुजारी को रात में नींद वहीं आई । प्रातःकाल स्नान किया मन्दिर की सेवा में संलग्न हुये । भगवान् को बड़ा सुन्दर शृंगार करने लगे, कमी टोपी लगाते हैं कमी

सरपंच कभी साफा बाँधने की सोचते हैं। आज सरकार को कचहरी में जाना है ऐसे अनेक भावनाओं के साथ दस बजे के प्रथम ही राज भोग का थाल अर्पण कर दिया और गद्गद् कण्ठ से प्रार्थना करने लगे सरकार आज आप के अनन्य सेवक वृद्ध केवट की तारीख है इतना कार्य करके आप मजन में संलग्न हो गये।

अदालत में केवट और सेठ साथ-साथ उपस्थित हुये। जज साहब ने कहा क्यों भोला तुम्हारा गवाह कहाँ है। बोला हुजूर कहीं यहीं होगा ? पेशकार ने चपरासी को आज्ञा दी रघुनाथ को बुलाओ। चपरासी दरवाजे पर पुकारने लगा।

कवित्त

रघुनाथ हाजिर है रघुनाथ हाजिर है,
 हाजिर है ऐसे तीन नारे जो लगाये हैं।
 चाल लपटी सी एक वृद्ध झुकी सी देह,
 दुपटी फटी सी सीस बाँधे धर धाये हैं॥
 हाथ माहि छड़ी पड़ी तुलसी को हियेमाल,
 माथे पर रोरी चारु चंदन चढ़ाये हैं।
 साहब के सामने 'विनीत' चपरासी साथ,
 आज रघुनाथ जू गवाह बन आये हैं॥

जज साहब ने प्रश्न किया रघुनाथ तुम्हारे सामने केवट ने रुपया दिया या ? रघुनाथ ने कहा हुजूर भोला ने रुपया तो दे दिया परन्तु सेठ से भूल हो गई रसीद लिख ली गई परन्तु देने में दूसरा कागज दे दिया। वह रसीद एक बही में रखी है। सेठ जो को यही रोक लिया जावे वही साहब

जावे उसकी जिल्द पीली है, नम्बर दो उस पर पड़ा है, सेठ जी को कचहरी में रोक लिया गया । सायकिल से चपरासी भेज कर पीली बही दुकान से मंगाई गई । जब साहब ने बही को खोलकर देखा उसमें रसीद निकल आई, साथ ही हस्ताक्षर सेठ के उसमें पड़े देखे, मुकदमा खारिज कर दिया । केवट को खर्चा दिलवाया । जब साहब सेठ से अप्रसन्न होते हुए कुछ बात कह रहे थे तब तक वह वृद्ध गवाह रघुनाथ बाहर निकल गये । चार बज चुके थे जज साहब फैसला लिख चुके थे । न्यायालय का कमरा जन शून्य हो चुका था केवल वृद्ध जज साहब के सामने खड़ा था । दोनों में परस्पर यों बातें होने लगी ।

जज ने प्रश्न किया—क्यों तुम्हारा यह गवाह कहाँ का था ?

केवट ने उत्तर दिया—महाराज हमारे ही ग्राम के तो थे ।

जज ने पुनः पूछा—यह रघुनाथ कौन है ?

केवट ने प्रसन्नता से कहा—जिनका मन्दिर है ।

जज ने कहा—मन्दिर तो इनका है, परन्तु मन्दिर बनवाने वाले यह सेठ हैं या जमींदार हैं ?

केवट हँसते हुये बोला—महाराज यह कोई सेठ जमींदार नहीं हैं यह वही रघुनाथ हैं जो मन्दिर में बैठे हैं ।

इतना सुनते ही जज साहब ने मेज पर हाथ मारते हुये कहा वही रघुनाथ ? वही रघुनाथ ?? माथा पीटने लगे, रोने लगे जज साहब कोर्ट से अपने बँगले पर पहुँचे और बहुत जोर से रोने लगे । साहब की पत्नी, पुत्र सेवक इत्यादि घबरा रहे थे । कोई उत्तर न मिलता था । यह खबर शहर में फैली अन्य आफिसरों ने सुना कि जज साहब रो रहे हैं कोई कहता, सुना पागल हो गये हैं । सभी ओर का जन ससूह बँगले पर इकट्ठा हो गया । और विशेष प्रेमियों ने जज साहब के रोने का, दुखी होने का कारण प्रेम से पूछा तब वह रोते हुए कहने लगे ।

सबैया

शिव शारद नारद शेष गनेसहू के नहिं ध्यान में आते रहें ।

वह आज 'विनीत' अदालत में किवटा के गवाह कहाते रहे ॥

(प्रेमियों ने कहा तो आपको बड़ा ही प्रसन्न होना चाहिये कि धोखे में ही आपको दर्शन हो गया, और चले गये इसका दुःख क्या है ? वह तो प्रत्येक भक्त को दर्शन देकर जाते ही हैं । जज ने विशेष रोते हुए कहा--

सुख धोखेहु दर्श दिये को भयौ दुख नाहिं जो तज जाते रहे ।

(दुख है तो इस बात का है)

कुरसी पै बना जज बैठा रहा जगदीश खड़े समझाते रहे ।

बस हो गया ! समझ लिया !! मैं तो जज हूँ न्याय करता हूँ, वह मेरी कचहरी में एक दीन-हीन की रक्षा के निमित्त दस मिनट खड़े और मैं कुर्सी पर बैठा रहा । इस घृष्टता का प्रायश्चित्त यही होगा कि यह शरीर आजीवन खड़े-खड़े उनका नाम लेगा ध्यान करेगा । प्रिय पाठक वही जज साहब वृन्दावन अयोध्या घाम में विचरते हुये, नौद भोजन इत्यादि शरीर के सभी धर्मों का खड़े-खड़े पालन करते थे । जब कभी सोचते उस केवट में कौन सी भक्ति थी जिसके लिये साक्षी बन के सरकार स्वयं आये ? तब यही चौपाई हृदय में आकर समाधान करती थी--

नवम सरल सब सन छल हीना :

मम भरोस हिय हरष न दीना ॥

(बोलिये भक्त बत्सल भगवान की जय ।

मानस संघ द्वारा प्रकाशित पुस्तकें,

Vinay Avasthi Sahib Bhuvan Vani Trust Donations

१—शंखरीमंगल-श्री शम्भुप्रसाद बहुगुना	७५
२—शतपञ्च चौपाई पं० विजयानन्द त्रिपाठी	२७५
३—मानस पञ्चतत्व	७५
४—महात्मा वाली श्री सुदर्शन सिंह	३१
५—श्री भगवन्नाम संकीर्तन	१०
६—देवर्षि नारद	३१
७—जीवन निर्माण [कहानियाँ]	६३
८—श्री हनुमान चालीसा सटीक	२५
९—श्री हनुमान चालीसा मूल सचित्र	१०
१०—शत्रुघ्न कुमार की आत्म कथा	३००
११—प्रभु आवत	४००
१२—मानस के अनुष्ठान	३५
१३—राक्षसराज	२००
१४—साधन सोपान	७५
१५—जरठ जटायु	३१
१६—श्री रामचरित मानस में वेदान्त दर्शन राय साहब हीरानाल वर्मा	१२५
१७—स्व स्वरूप दर्शन	१००
१८—सब ग्रन्थन को रस	१२५
१९—श्री रामचरित मानस में मिथिला धाम श्री अवधकिशोरदास श्री वष्णव	२५
२०—अनुरागी केवट पं० रामरक्षित रामायणी	५०
२१—श्री मानस सिद्धान्त वेदान्त भूषण श्री पं० रामकुमार दास जी रामायणी	२५०
२२—धर्मरथ पं० रामकुमारदास जी	७५
२३—मानस पारायण पूजन पद्धति श्री पं० रामकुमारदास जी रामायणी	६०
२४—सुख शान्ति के दो मन्त्र संत विनीत विहारीदास 'विनीत'	३०
२५—वीर वधू उमिला	१५
२६—अनुसुइया चरित्र	३०
२७—व्यंगोपदेश	६०
२८—भगवत भजन कीर्तन	३५
२९—विवाह प्रसङ्ग	२५
३०—सुखी जीवन	२५
३१—क्या कुम्भजलि	१००

३२—नवधा मक्ति के सत्त्व (अंता विनीत विहा की नासु (विनीत) ions	.६०
३३—बाल चरित्र	.७०
३४—मानस में हठीला भक्त केवट	.२०
३५—श्री वैदेही की विदा	.२०
३६—नये गुग का नारद मोह	.३०
३७—जटाशू की जीवनान्त भांकी	.२०
३८—मानस में चरित्र बल	.४०
३९—मानस में महिला समाज	.२५
४०—मानस में रुचिर प्रसंग	.२५
४१—मानस में प्राचीन दहेज प्रथा और आज उसकी व्याख्या	.४५
४२—बाल्मीकि तुलसी भये [नाटक]	
[श्री भगवानदास सकड़िया]	.७५
४३—मानसता के चरण	.५०
४४—मानसकण गो० महन्त रोशनपुरी	१.००
४५—गूढार्थ च० द्वितीय खण्ड	३.००
दण्डी स्वामी प्रज्ञानानन्द जी नरस्वामी	
४६—बान्धवदेश महाराज रघुराजसिंह	१.००
गुरु श्री रामप्यारे अग्निहोत्री	
४७—तुलसी तीर्थ रामवन	१.००
४८—मेघदूत पंजरिका टीका	४.००
४९—नवधा मक्ति [श्री फतेहबहादुर सकसेना]	.५०
५०—हनुमान नाटिका [श्री बलदेवदासजी]	.१५
५१—तुलसी शोच डा० बीरेन्द्रपाल श्रीवास्तव	२.००
५२—मानस तरंग [प्रथम खंड]	१.५०
[कविरत्न पं० भैरवप्रसाद द्विवेदी]	
५३—मानस तरंग [तृतीय खंड]	
कविरत्न पं० भैरवप्रसाद द्विवेदी	
५४—मानस हिलोर पं० रामरत्न रामायणी	१.५०
५५—हनुमान सहस्रनाम	.६०
५६—श्री दिव्य चूड़ामणि पं० श्री हुबलाल रामायणी	.३५
५७—मानस रत्न (प्रथम खंड)	.२५
५८—तुलसी के द्वादशद सव्योहार राजेन्द्रसिंह	.६०
५९—मानस प्रणेत शङ्कर श्री राघवाचार्य स्वामी जी महाराज	६.००
मन्त्री—मानस संघ, पो० रामवन, (सतना)	.२०